विज्ञान भैरव तंत्र part 3

विज्ञान भैरव तंत्र विधि—56 (ओशो)

आत्म-स्मरण की चौथी विधि—

''भ्रांतियां छलती है, रंग सीमित करते है, विभाज्य भी अविभाज्य है।''–तंत्र सुत्र

''भ्रांतियां छलती है, रंग सीमित करते है, विभाज्य भी अविभाज्य है।''

यह एक दुर्लभ विधि है। जिसका प्रयोग बहुत कम हुआ है। लेकिन भारत के एक महानतम शिक्षक शंकराचार्य ने इस विधि का प्रयोग किया है। शंकर ने तो अपना पूरा दर्शन ही इस विधि के आधार पर खड़ा किया है। तुम उनके माया के दर्शन को जानते हो। शंकर कहते है कि सब कुछ माया है। तुम जो भी देखते, सुनते या अनुभव करते हो, सब माया है। वह सत्य नहीं है। क्योंकि सत्य को इंद्रियों से नहीं जाना जा सकता।

तुम मुझे सुन रहे हो और मैं देखता हूं कि तुम मुझे सुन रहे हो, हो सकता है कि यह सब स्वप्न हो। यह स्वप्न है या नहीं, यह तय करने का कोई उपाय नहीं है। हो सकता है कि मैं स्वप्न देख रहा हूं। कि तुम मुझे सुन रहे हो। यह मैं कैसे जान सकता हूं कि यह स्वप्न नहीं, सत्य है। कोई उपाय नहीं है।

च्वांगत्सु के बारे में कहा जाता है कि एक रात उसने स्वप्न देखा कि वह तितली हो गया है। सुबह जागने पर वह बहुत दुःखी था—और वह दुःखी होने वाला व्यक्ति नहीं था। लोगों ने कभी उसे दुःखी नहीं देखा था। उसके शिष्य इकट्ठे हुए और उन्होंने पूछा: गुरूदेव आप इतने दुःखी क्यों है?

च्वांगत्सु ने बताया कि रात के सपने के कारण वह दुःखी है। उसके शिष्यों ने कहा कि हैरानी की बात है कि आप सपने के कारण दुःखी है। आपने तो हमें यही सिखाया कि यदि सारा संसार भी दुःख देने आए तो दुःखी मत होना। और एक सपने के कारण आप दुःखी है? आप क्या कहते है? च्वांगत्सु ने कहा कि यह सपना ही ऐसा है कि इसमे मैं बहुत उलझन में पड़ गया हूं और इसलिए दुःखी हूं। मैंने सपना देखा कि मैं तितली हो गया हूं।

शिष्यों ने पूछा कि इसमें हैरानी की बात क्या है?

च्वांगत्सु ने कहा कि दिक्कत यह है कह अगर च्वांत्सु सपना देख सकता है कि मैं तितली हो गया हूं। तो इससे उलटा भी हो सकता है। तितली सपना देख सकती है कि मैं च्वांगत्सु हो गयी हूं। यही कारण है कि मैं परेशान हूं कि क्या ठीक है और क्या गलत है? क्या च्वांगत्सु ने सपना देखा था कि वह तितली हो गया है या कि तितली सोने चली गई और उसने सपना देखा कि वह च्वांगत्सु हो गई है। अगर एक बात हो सकती है तो दूसरी भी हो सकती है।

और कहा जाता है कि च्वांगत्सु को जीवनभर एक पहेली का हल न मिला, यह सदा उसके साथ रही।

यह कैसे तय हो कि में जो अभी तुमसे बात कर रहा हूं, वह सपने में नहीं कर रहा हूं? यह कैसे तय हो कि तुम सपना नहीं देख रहे हो कि मैं बोल रहा हूं? इंद्रियों से कोई निर्णय संभव नहीं है, क्योंकि सपना देखते हुए सपना यथार्थ मालूम पड़ता है—उतना ही यथार्थ जितना कुछ भी दूसरा यथार्थ मालूम पड़ता है। जब तुम सपना देखते हो तो तुम्हें वह सदा सच्चा मालूम पड़ता है। और जब सपने को सच की तरह देखा जा सकता है तो क्यों सच को सपने की तरह नहीं देखा जा सकता है।

शंकर कहते है कि इंद्रियों से यह जानना संभव नहीं है कि जो चीज तुम्हारे सामने है वह सच है या स्वप्न। और जब जानने का उपाय ही नहीं है कि वह सच है या झूठ तो शंकर उसे माया कहते है।

माया का अर्थ झूठ नहीं है, माया का अर्थ है कि यह निर्णय करना असंभव है कि वह सच है या झूठ। इस बात को स्मरण रखो। पश्चिम की भाषाओं में माया का गलत अनुवाद हुआ है। पश्चिम की भाषाओं में माया शब्द अयथार्थ या झूठ का अर्थ रखता है। यह अर्थ सही नहीं है। माया का इतना ही अर्थ है कि यह निश्चित नहीं हो सकता है कि कोई चीज यथार्थ है कि अयथार्थ। यह उलझन माया है।

यह सारा जगत माया है। तुम उसके संबंध में निशचित नहीं हो सकते। कुछ भी निर्णय पूर्वक नहीं कह सकते। यह जगत निरंतर तुमसे छूट-छूट जाता है, निरंतर बदल जाता है। कुछ से कुछ हो जाता है। यह इंद्रजाल सा लगता है। स्वप्नवत लगता है। और यह विधि इसी दृष्टि से संबधित है।

''भ्रांतियां छलती है।''

या जो चीज छले वह भ्रांति है।

''रंग सीमित करते है, विभाज्य भी अविभाज्य है।''

इस माया के जगत में कुछ भी निश्चित नहीं है। सारा जगत इंद्रधनुष के समान है, वह भासता है, लेकिन है नहीं। जब तुम उससे बहुत दूर होते हो तो वह है, जब करीब जाते हो तो वह खोता जाता है। जितना करीब जाओगे उतना ही वह खोता जाएगा। और अगर तुम उस बिंदू पर पहुंच जाओ जहां इंद्रधनुष दिखाई पड़ता था तो वह बिलकुल खो जायेगा।

सारा जगत इंद्रधनुष के रंगों जैसा है। और सच्चाई यही है। जब तुम दूर होते हो, सब कुछ आशा पूर्ण दिखाई देता है; जब तुम करीब आते हो, आशा खो जाती है। और जब तुम मंजिल पर पहुंच जाते हो, तब तो राख ही राख बचती है। मृत इंद्रधनुष बचता है जिसके सब रंग उड़ जाते है। कुछ भी वैसा नहीं है जैसा दिखता था। जैसा तुमने चाहा था वैसा कुछ भी नहीं है।

''विभाज्य भी अविभाज्य है।''

तुम्हारा सब गणित, तुम्हारा सब हिसाब-किताब, तुम्हारी सब धारणाएं, तुम्हारे सब सिद्धांत—सब कुछ व्यर्थ हो जाते है। अगर तुम इस माया को समझने की चेष्टा करोगे तो तुम्हारी चेष्टा ही तुम्हें और भ्रांत कर देगी। वहां कुछ भी निश्चित नहीं है। सब कुछ अनिश्चित है। जगत एक प्रवाह है, परिवर्तनों का प्रवाह है, और तुम्हारे लिए यह तय करने का कोई उपाय नहीं है कि क्या सच है और क्या नहीं है।

इस हालत में क्या होगा? अगर तुम्हारी ऐसी दृष्टि हो तो क्या होगा? अगर यह दृष्टि तुममें गहरी उतर जाए कि जिस चीज के संबंध में निश्चित नहीं हो सके वह माया है तो तुम अपने ही आप, सहजता से अपनी तरफ मुड़ जाओगे। तब तुम्हें अपना केंद्र सिर्फ अपने भीतर खोजना होगा। वही एकमात्र सुनिश्चितता है।

इसे इस तरह समझने की कोशिश करो। रात में मैं स्वप्न देख सकता हूं कि मैं तितली बन गया हूं। और मैं स्वप्न मैं स्वप्न में तय नहीं कर सकता कि यह सच है या झूठ है। और अगली सुबह मैं च्वांगत्सु की तरह उलझन में पड़ सकता हूं कि अब कहीं तितली ही यह सपना तो नहीं देख रही कि वह च्वांगत्सु हो गई है।

अब ये दो सपने है और तुलना का कोई उपाय नहीं है। कि इनमें कौन सच है और कौन झूठ। लेकिन च्वांगत्सु एक चीज चूक रहा है—वह है स्वप्न देखने वाला। वह केवल सपनों की सोच रहा है, उसकी तुलना कर रहा , और स्वप्न देखने वाले को चूक रहा है। वह उसे चूक रहा है जो स्वप्न देख रहा है। कि च्वांगत्सु तितली बन गया है। और वह उसे चूक रहा है जो विचार करता है कि बात बिलकुल उलटी भी हो सकती है—कि तितली सपना देख रही हो कि सह च्वांगत्सु हो गई है। यह देखने वाला कौन है? द्रष्टा कौन है। कौन है वह जो साया हुआ था और अब जागा हुआ है?

तुम मेरे लिए असत्य हो सकते हो। तुम मेरे लिए स्वप्न हो सकते हो। लेकिन मैं अपने लिए स्वप्न नहीं हो सकता। क्योंकि स्वप्न के होने के लिए भी एक सच्चे स्वप्न देखने वाले की जरूरत है। झूठे स्वप्न के लिए भी सच्चे स्वप्नदर्शी की जरूरत है। स्वप्न भी सच्चे स्वप्नदर्शी के बिना नहीं हो सकता। तो स्वप्न को छोड़ो।

यह विधि कहती है: स्वप्न को भूल जाओ। सारा जगत माया है, तुम माया नहीं हो। तुम जगत के पीछे मत भागों। क्योंकि वहां सुनिश्चित होने की कोई संभावना नहीं है। कि क्या सत्य है और असत्य। और अब तो वैज्ञानिक शोध से भी यह बात सिद्ध हो चुकी है।

पिछले तीन सौ वर्षों तक विज्ञान सुनिश्चित था और शंकर एक दार्शनिक, एक कवि मालूम पड़ता था। तीन सदियों तक विज्ञान असंदिग्ध था, सुनिश्चित था, लेकिन पिछले दो दशकों से विज्ञान का निश्चय अनिश्चय में बदल गया है। अब बड़े से बड़ा वैज्ञानिक कहते है कि कुछ भी निश्चित नहीं है। और पदार्थ के साथ हम कभी निश्चित नहीं हो सकते। सब कुछ पुन: संदिग्ध हो गया है। सब कुछ प्रवाहमान, बदलता हुआ मालूम पड़ता है। बाहरी रूप-रंग ही निश्चित मालूम पड़ता है। लेकिन जैसे-जैसे तुम उसमे गहरे जाते हो सब अनिश्चित होता जाता है। सब धुंधला-धुंधला होता जाता है।

शंकर कहते है—और तंत्र ने सदा कहा है—कि जगत माया है। शंकर के जन्म के पहले भी तंत्र इस विधि का उपयोग करता था जगत माया है। उसे स्वप्नवत समझो। और अगर तुमने इसे माया समझा—और यदि तुमने जरा ध्यान दिया तो तुम जानोंगे ही कि यह माया है। तो तुम्हारी चेतना का पूरा तीन भीतर की और मुड़ जाएगा। क्योंकि सत्य को जानने की अभीप्सा प्रगाढ़ है।

अगर सारा जगत अयथार्थ है, असत्य है, तो उससे कोई आश्रय नहीं मिल सकता है। तब तुम छायाओं के पीछे भाग रहे हो। अपने समय, शक्ति और जीवन का अपव्यय कर रह हो। अब भी तर की तरफ चलो। क्योंकि एक बात तो निश्चित है कि मैं हूं। यदि सारा जगत भी माया है तो भी एक चीज निश्चित है कि कोई है जो जानता है कि यह माया है। ज्ञान भ्रांत हो सकता है, ज्ञेय भ्रांत हो सकता है, लेकिन ज्ञाता भ्रांत नहीं हो सकता। वही एक मात्र निश्चय है, एकमात्र चट्टान है, जिस पर तुम खड़े हो सकते हो।

यह विधि कहती है: ''संसार को देखो; यह स्वप्नवत है, माया है, वैसा बिलकुल नहीं है जैसा भासता है। यह बस इंद्रधनुष जैसा है। इस भाव की गहराई में उतरो और तुम अपने पर फेंक दिए जाओगे। और अपने अंतस पर आने के साथ-साथ तुम निश्चय को, सत्य को, असंदिग्ध को, परम को उपलब्ध हो जाते हो।

विज्ञान कभी परम तक नहीं पहुंच सकता, वह सदा सापेक्ष रहेगा। सिर्फ धर्म परम को उपलब्ध हो सकता है। क्योंकि धर्म स्वप्न को नहीं, स्वप्नदर्शी को खोजता है। धर्म दृश्य को नहीं, द्रष्टा को खोजता है। धर्म उसे खोजता है जो चिन्मय है।

ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र, भाग-3

प्रवचन—35

विज्ञान भैरव तंत्र विधि—57 (ओशो)

साक्षित्व की पहली विधि–

''तीव्र कामना की मनोदशा में अनुद्विग्न रहो।''

''तीव्र कामना की मनोदशा में अनुद्विग्न रहो।''
जब तुम्हें कामना घेरती है, चाहे पकड़ती है, तो तुम उत्तेजित हो जाते हो, उद्विग्न हो जाते हो। यह स्वाभाविक है। जब चाह पकड़ती है तो मन डोलने लगता है। उसकी सतह पर लहरें उठने लगती है। कामना तुम्हें खींचकर कहीं भविष्य में ले जाती है; अतीत तुम्हें कहीं भविष्य में धकाता है। तुम उद्विग्न हो जाते हो, बेचैन हो जाते हो। अब तुम चैन में न रहे। चाह बेचैनी है, रूग्णता है।

यह सूत्र कहता है: ''तीव्र कामना की मनोदशा में अनुद्विग्न रहो।''

लेकिन अनुद्विग्न कैसे रहा जाए? कामना का अर्थ ही उद्वेग है। अशांति है; फिर अनुद्विग्न कैसे रहा जाए? शांत कैसे रहा जाए? और वह भी कामना के तीव्रतम क्षणों में।

तुम्हें कुछ प्रयोगों से गुजरना होगा। तो ही तुम इस विधि का अभिप्राय समझ सकते हो। तुम क्रोध में हो; क्रोध ने तुम्हें पकड़ लिया है। तुम अस्थायी रूप से पागल हो, आविष्ट हो, अवश हो। तुम होश में नहीं हो। इस अवस्था में अचानक स्मरण करो कि अनुद्विग्न रहना है—मानों तुम कपड़े उतार रहे हो। नग्न हो रहे हो। भीतर नग्न हो जाओ, क्रोध से निर्वस्त्र हो जाओ। क्रोध तो रहेगा, लेकिन अब तुम्हारे भीतर एक बिंदु है जो अनुद्विग्न है, शांत है। तुम्हें पता होगा कि क्रोध परिधि पर है; बुखार की तरह वह वहां है। परिधि कांप रही है। परिधि अशांत है। लेकिन तुम उसके दृष्टा हो। और यदि तुम उसके द्रष्टा हो सके तो तुम अनुद्विग्न रहोगे। तुम उसके साक्षी हो जाओ, और तुम शांत हो जाओगे। वहाँ शांत बिंदु ही तुम्हारा मूलभूत मन है मूलभूत मन अशांत नहीं हो सकता। वह कभी अशांत नहीं होता है। लेकिन तुमने उसे कभी देखा नहीं है। जब क्रोध होता है तो तुम्हारा उससे तादात्म्य हो जाता है। तुम भूल जाते हो कि क्रोध तुमसे भिन्न है, पृथक है। तुम उससे एक हो जाते हो; और तुम उसके द्वारा सक्रिय हो जाते हो, कुछ करने लगते हो। और तब दो चीजें संभव है।

तुम क्रोध में किसी के प्रति, क्रोध के विषय के प्रति हिंसात्मक हो सकते हो; लेकिन तब तुम दूसरे की और गति कर गए। क्रोध ने तुम्हारे और दूसरे के बीच जगह ले ली। यहां मैं हूं जिसे क्रोध हुआ है, फिर क्रोध है ओ वहां तुम हो, मेरे क्रोध का विषय। क्रोध से मैं दो आयामों में यात्रा कर सकता हूं। या तो मैं तुम्हारी तरफ जा सकता हूं, अपने क्रोध के विषय की तरफ। तब तुम जिसने मेरा अपमान किया, मेरी चेतना के केंद्र बन गए; तब मेरा मन तुम पर केंद्रित हो गया। यह ढंग है क्रोध से यात्रा करने का।

दूसरा ढंग है कि तुम अपनी और स्वयं की और यात्रा करो। तुम उस व्यक्ति की और नहीं गति करते जिसने तुम्हें क्रोध करवाया। बल्कि उस व्यक्ति की तरफ जाते हो जो क्रोध अनुभव करता है। तुम विषय की और न जाकर विषयी की और गति करते हो।

साधारणत: हम विषय की और ही बढ़ते है। और विषय की और बढ़ने से मन का धूल-भरा हिस्सा उत्तेजित और अशांत हो जाता है। और तुम्हें अनुभव होता है की मैं अशांत हूं। अगर तुम भीतर की और मुड़ो अपने केंद्र की और मुड़ो, तो तुम धूल वाले हिस्से के साक्षी हो जाओगे। तब तुम देख सकोगे। कि धूल वाला हिस्सा तो अशांत है, लेकिन मैं अशांत नहीं हूं। और तुम किसी भी इच्छा के साथ किसी भी अशांति के साथ यह लेकर प्रयोग कर सकते हो।

तुम्हारे मन में कामवासना उठती है; तुम्हारा सारा शरीर उससे अभिभूत हो जाता है। अब तुम काम विषय की और अपनी वासना के विषय की और जा सकते हो। चाहे वह वास्तव में वहां हो या न हो। तुम कल्पना में भी उसकी तरफ यात्रा कर सकते हो। लेकिन तब तुम और ज्यादा अशांत होते जाओगे। तुम अपने केंद्र से जितनी दूर निकल जाओगे उतने ही अधिक अशांत होते जाओगे। सच तो यह है कि दूरी और अशांति होगे और केंद्र के जितनी करीब होगे उतने कम अशांत होगे। ओर अगर तुम ठीक केंद्र पर हो तो कोई अशांति नहीं है।

हर तूफान के बीचो बीच एक केंद्र होता है। जो बिलकुल शांत रहता है; वैसे की क्रोध के तूफान के केंद्र पर, काम के तूफान के केंद्र पर, किसी भी वासना के तूफान के केंद्र—ठीक केंद्र पर कोई तूफान नहीं होता। और कोई भी तूफान शांत केंद्र के बिना नहीं हो सकता; वैसे ही क्रोध भी तुम्हारे उस अंतरस्थ के बिना नहीं हो सकता जो क्रोध के पार है।

यह स्मरण रहे, कोई भी चीज अपने विपरीत तत्व के बिना नहीं हो सकती। विपरीत जरूरी है; उसके बिना किसी भी चीज होने की संभावना नहीं है। यदि तुम्हारे भीतर कोई स्थिर केंद्र न हो तो गति असंभव है। यदि तुम्हारे भीतर शांत केंद्र न हो तो अशांति असंभव है।

इस बात का विश्लेषण करो, इसका निरीक्षण करो। अगर तुम्हारे भीतर परम शांति का कोई केंद्र न होता तो तुम कैसे जानते कि मैं अशांत हूं? तुम्हें तुलना करनी चाहिए, तुलना के लिए दो बिंदू चाहिए।

मान लो कि कोई व्यक्ति बीमार है। वह व्यक्ति बीमारी अनुभव करता है; क्योंकि उसके भीतर कहीं कोई बिंदू है, जहां परम स्वास्थ विराजमान है। इससे ही वह तुलना कर सकता है। तुम कहते हो कि मुझे सिरदर्द है; लेकिन तुम कैसे जानते हो कि यह दर्द है, सिरदर्द है? अगर तुम ही सिरदर्द होते तो तुम इसे कैसे जान सकते थे। अवश्य ही तुम कुछ और हो। कोई और हो। तुम द्रष्टा हो। साक्षी हो। जो कहता है कि मुझे सिरदर्द है। इस दर्द को वही अनुभव कर सकता है जो खुद दर्द नहीं है। अगर तुम बीमार हो, ज्वर ग्रस्त हो तो तुम उसे अनुभव कर सकते हो। क्योंकि तुम ज्वर नहीं हो। खुद ज्वर को नहीं अनुभव कर सकता है; कोई चाहिए जो उसके पार हो। विपरीत जरूरी है।

जब तुम क्रोध में हो और अगर तुम महसूस करते हो कि मैं क्रोध में हूं तो उसका अर्थ है कि तुम्हारे भीतर कोई बिंदू है जो अब भी शांत है और जो साक्षी हो सकता है। यह बात दूसरी है कि तुम इस बिंदू को नहीं देखते हो। तुम इस बिंदू पर अपने को कभी नहीं देखते हो। यह एक अलग बात है। लेकिन वह सदा अपनी मौलिक शुद्धता में वहां मौजूद है।

यह सूत्र कहता है: ''तीव्र कामना की मनोदशा में अनुद्विग्न रहो।''

तुम क्या करते हो? यह विधि दमन के पक्ष में नहीं है। यह विधि यह नहीं कहती है कि जब क्रोध आए तो उसे दबा दो और शांत हो जाओ। नहीं, अगर दमन करोगे तो तुम ज्यादा अशांति निर्मित करोगे। अगर क्रोध हो और उसे दबाने का प्रयत्न भी साथ-साथ हो तो उससे अशांति दुगुनी हो जाएगी। नहीं; जब क्रोध आए तो द्वार दरवाजे बंद कर लो और क्रोध पर ध्यान करो। क्रोध को होने दो; तुम अनुद्विग्न रहो और क्रोध का दमन मत करो।

दमन करना आसान है; प्रकट करना भी आसान है। और हम दोनों करते है। अगर स्थिति अनुकूल हो तो हम क्रोध को प्रकट कर देते है। अगर उसकी सुविधा हो, अगर तुम्हें खुद कोई खतरा नहीं हो तो तुम क्रोध को अभिव्यक्त कर दोगे। अगर तुम दूसरे को चोट पहुंचा सकते हो और दूसरा बदले में तुम पर चोट कर सकता है। तो तुम अपने क्रोध को खुली छूट दे दोगे। और अगर क्रोध को प्रकट करना खतरनाक हो, अगर दूसरा तुम्हें ज्यादा चोट कर सकने में समर्थ हो, अगर वह तुम्हारा मालिक हो या तुमसे ज्यादा बलवान हो, तो तुम क्रोध को दबा दोगे।

अभिव्यक्ति और दमन सरल है; साक्षी कठिन है। साक्षी न अभिव्यक्ति है और न दमन; वह दोनों में कोई नहीं है। वह अभिव्यक्ति नहीं है। क्योंकि तुम उसे दूसरे पर नहीं प्रकट कर रहे हो। तुम उसका दमन भी नहीं करते। तुम उसे शून्य में विसर्जित कर रहे हो। तुम उस पर ध्यान कर रहे हो।

किसी आईने के सामने खड़े हो जाओ और अपने क्रोध को प्रकट करो—और उसके साक्षी बने रहो। तुम अकेले हो, इसलिए तुम उस पर ध्यान कर सकते हो। तुम जो भी करना चाहो करो, लेकिन शून्य में करो। अगर तुम किसी को मारना पीटना चाहते हो तो खाली आकाश के साथ मार-पीट करो। अगर क्रोध करना चाहते हो तो क्रोध करो; अगर चीखना चाहते हो तो चीखो। लेकिन सब अकेले में करो। और अपने को उस केंद्र बिंदू की भांति स्मरण रखे जो यह सब नाटक देख रहा है। तब यह एक साइको ड्रामा बन जाएगा। और तुम उस पर हंस सकते हो। वह तुम्हारे लिए गहरा रेचन बन जाएगा। और न केवल तुम्हारा क्रोध विसर्जित हो जाएगा, बल्कि तुम उससे कुछ फायदा उठा लोगे। तुम्हें एक प्रौढ़ता प्राप्त होगी; तुम एक विकास को उपलब्ध होओगे। और अब तुम्हें पता होगा कि जब तुम क्रोध में भी थे तो कोई था जो शांत था। अब इस केंद्र को अधिकाधिक उघाड़ते जाओ। और वासना की अवस्थ में इस केंद्र को उघाड़ना आसान है।

इसीलिए तंत्र वासना के विरोध में नहीं है। वह कहता है: वासना में उतरो, लेकिन उस केंद्र को स्मरण रखो जो शांत है। तंत्र कहता है कि इस प्रयोग के लिए कामवासना का भी उपयोग किया जा सकता है। काम-कृत्य में उतरो लेकिन अनुद्विग्न रहो, शांत रहो। और साक्षी रहो। गहरे में दृष्टा बने रहो। जो भी हो रहा है वह परिधि पर हो रहा है और तुम केवल देखने वाले हो, दर्शक हो।

वह विधि बहुत उपयोगी हो सकती है, और इससे तुम्हें बहुत लाभ हो सकता है। लेकिन यह कठिन होगा। क्योंकि जब तुम अशांत होते हो तो तुम सब कुछ भूल जाते हो। तुम यह भूल जाते हो कि मुझे ध्यान करना है। तो फिर इसे इस भांति प्रयोग करो। उस क्षण के लिए मत रुको जब तुम्हें क्रोध होता है। उस क्षण के लिए मत रुको। अपना कमरा बंद करो और क्रोध के किसी अतीत अनुभव को स्मरण करो जिसमें तुम पागल ही हो गए थे। उसे स्मरण करो और फिर से उसका अभिनय करो।

यह तुम्हारे लिए सरल होगा। उस अनुभव को फिर से अभिनीत करो, उसे फिर से जाओ। शायद तुम्हें पता न हो कि मन टेप-रिकार्डिंग यंत्र जैसा है। अब तो वैज्ञानिक कहते है, अब तो यह वैज्ञानिक तथ्य है कि अगर तुम्हारे स्मृति केंद्रों को इलेक्ट्रोड्स से छुआ जाए तो वे केंद्र फिर से संग्रहीत अनुभवों को दोहराने लगते है। उदाहरण के लिए तुमने कभी क्रोध किया और वह घटना तुम्हारे मन में टेप-रिकार्डर पर रिकार्ड है; ठीक उसी अनुक्रम में वह रिकार्ड है जिस अनुक्रम में वह घटित हुई थी। अगर उसे इलेक्ट्रोड्स से छूओगे तो वह घटना पुन: जीवंत होकर दोहराने लगेगी। तुम्हें वही-वहीं भाव फिर से होंगे जो क्रोध करते समय हुए थे। तुम्हारी आंखे लाल हाँ जाएगी। तुम्हारा शरीर कांपने लगेगा। ज्वरग्रस्त हो जाएगा। पूरी कहानी फिर दोहरेगी। और ज्यों ही इलेक्ट्रोड को वहां से हटाओगे, नाटक बंद हो जायेगा। पूरी कहानी फिर दोहरेगी। यदि तुम उसे फिर ऊर्जा देते हो, वह फिर बिलकुल शुरू से चालू हो जाता है।

अब वे कहते है कि मन एक रिकार्डिंग मशीन है और तुम किसी भी अनुभव को दोहरा सकते हो।

लेकिन स्मरण ही मत करो, उसे फिर से जीओं। अनुभव को फिर जीना शुरू करो और मन उसे पकड़ लेगा। वह घटना वापस लौट आयेगी। और तुम उसे फिर जीओगे। और इसे पुन: जीते हुए अनुद्विग्न रहो, शांत रहो। अतीत से शुरू करो। और यह सरल है। क्योंकि अब यह नाटक है। यह यथार्थ स्थिति नहीं है। और अगर तुम यह करने में समर्थ हो गए तो जब सच ही क्रोध की स्थित पैदा होगी। तुम उसे भी कर सकोगे। और यह प्रत्येक कामना के साथ किया जा सकता है। प्रत्येक कामना के साथ किया जाना चाहिए।

अतीत के अनुभवों को फिर से जीना बड़े काम का है। हम सब के मन में घाव है; ऐसे घाव है जो अभी भी हरे है। अगर तुम उन्हें फिर से जी लोगे तो तुम निर्भार हो जाओगे। अगर तुम अपने अतीत में लोट सके और अधूरे अनुभवों को जी सके तो तुम अपने अतीत के बोझ से मुक्त हो जाओगे। तुम्हारा मन ताजा हो जाएगा। धूल झड़ जायेगी।

अपने अतीत में से कोई अनुभव स्मरण करो जो तुम्हारे देखे अधूरा पडा है। तुम किसी की हत्या करना चाहते थे। तुम किसी को प्रेम करना चाहते थे। तुम यह या वह करना चाहते थे। लेकिन वे सारे काम अपूर्ण रह गए अधूरे रह गये। ओ वह अधूरी चीज तुम्हारे मन के आकाश में बादल की भांति मँडराती रहती है। वह तुम्हें और तुम्हारे कृत्यों को सदा प्रभावित करती रहती है। उस बादल को विसर्जित करना होगा। तो उसके काल पथ को पकड़कर मन में पीछे लोटों और उन कामनाओं को फिर से जीओं जो अधूरी रह गई है। उन घावों को फिर से जीओं जो अभी भी हरे है। वे घाव भर जाएंगे। तुम स्वस्थ हो जाओगे। और इस प्रयोग के द्वारा तुम्हें एक झलक मिलेगी। कि कैसे किसी अशांत स्थिति में शांत रहा जाए।

''तीव्र कामना की मनोदशा में अनुद्विग्न करो।''

गुरजिएफ ने इस विधि का खूब प्रयोग किया है। वह इसके लिए परिस्थितियां निर्मित करता था। लेकिन परिस्थितियां निर्मित करने के लिए समूह जरूरी है। आश्रम जरूरी है। तुम अकेले यह नहीं कर सकते। फाउंटेन ब्लू में गुरजिएफ ने एक आश्रम बनाया था और वह बड़ा कुशल गुरु था जो जानता था कि स्थिति कैसे निर्मित की जाती है।

तुम किसी कमरे में प्रवेश करते हो जहां एक समूह पहले से बैठा है। तुम कमरे में प्रवेश करते हो और तभी कुछ किया जाता है। जिससे तुम क्रोधित हो जाते हो। और वह चीज इस स्वाभाविक ढंग से की जाती है कि तुम्हें कभी कल्पना भी नहीं होती कि

यह परिस्थिति तुम्हारे लिए निर्मित की जा रही है। यह एक उपाय था। कोई व्यक्ति कुछ कहकर तुम्हें अपमानित कर देता है। और तुम अशांत हो जाते हो। और फिर हर कोई उस अशांति को बढ़ावा देता है। और तुम पागल हो जाते हो। और जब तुम ठीक विस्फोट के बिंदू पर पहुंचते हो तो गुरूजिएफ चिल्लाकर कहता है: स्मरण करो और अनुद्विग्न रहो।

ऐसी परिस्थिति निर्मित की जा सकती है। लेकिन केवल वहीं जहां अनेक लोग अपने ऊपर काम कर रहे हो। और जब गुरूजिएफ चिल्लाकर कहता कि स्मरण करो और अनुद्विग्न रहो; तो तुम जान जाते हो कि यह परिस्थिति पहले से तैयार कि गई थी। लेकि अब तुम्हारा उद्विग्न, तुम्हारी अशांति इतनी शीध्रता से, इतनी जल्दी मिटने नहीं वाली है। इस अशांति की जड़ें तुम्हारे शरीर में है। तुम्हारी ग्रंथियों ने तुम्हारे रक्त में जहर छोड़ दिया है। तुम्हारा शरीर उससे प्रभावित है। क्रोध इतनी शीध्रता से नहीं जाने वाला है। अब जबकि तुम्हें पता हो गया है कि मुझे धोखा दिया गया है। कि किसी ने सच ही मुझे अपमानित नहीं किया है। तो भी तुम कुछ नहीं कर सकते। क्रोध जहां का तहां है; तुम्हारे शरीर क्रोध की स्थिति में है।

लेकिन एक बात होती है। कि अचानक तुम्हारा ज्वर भीतर शांत होने लगता है। क्रोध अब सिर्फ शरीर पर परिधि पर है। केंद्र पर तुम अचानक शीतल होने लगते हो। और अब तुम जानते हो कि मेरे भीतर एक बिंदू है जो अनुद्विग्न है, शांत है। और तुम हंसने लगते हो। अभी भी तुम्हारी आंखें क्रोध से लाल है, तुम्हारा चेहरा पशुवत हिंसक बना हुआ है। लेकिन तुम हंसने लगते हो। अब तुम्हें दो चीजें पता है; एक अनुद्विग्न केंद्र और दूसरी उद्विग्न परिधि।

तुम एक दूसरे के लिए सहयोगी हो सकते हो। तुम्हारा परिवार ही आश्रम बन सकता है; तुम एक दूसरे की मदद कर सकते हो। मित्र अपने परिवार से बात करके तय कर सकते हो कि पिता के लिए या मां के लिए एक परिस्थिति पैदा की जाए; और पूरा परिवार उस परिस्थिति के पैदा करने में हाथ बँटाता है। जब मां या पिता पूरी तरह विक्षिप्त हो जाते है तब सब हंसने लगते है। और कहते है: बिलकुल अनुद्विग्न रहो।

तुम परस्पर एक दूसरे की मदद कर सकते हो।

और यह अनुभव बहुत अद्भुत है। जब तुम्हें किसी उतेजित परिस्थिति के भीतर एक शीतल केंद्र का पता चल जाए तो तुम उसे भूल नहीं सकते। और तब तुम किसी भी तरह की अशांत परिस्थिति में उसे स्मरण कर सकते हो, उसे पुन: उपलब्ध कर सकते हो।

पशिचम में अब एक विधि का, चिकित्सा विधि का प्रयोग हो रहा है। जिसे वे साइकोड्रामा कहते है। वह सहयोगी है और इसी तरह की विधियों पर आधारित है। इस साइकोड्रामा में तुम एक अभिनय करते हो, एक खेल खेलते हो। शुरू में तो वह खेल ही है; लेकिन देर अबेर तुम उसके वशीभूत हो जाते हो। और जब तुम वशीभूत होते हो, आविष्ट होते हो तो तुम्हारा मन सक्रिय हो जाता है। क्योंकि तुम्हारे शरीर और मन स्वचलित ढंग से काम करते है। वे स्वचलित व्यवहार करते है।

तो साइकोड्रामा में व्यक्ति क्रोध की स्थिति में सचमुच क्रोधित हो जाता है। तुम सोच सकते हो कि वह अभिनय कर रहा है। लेकिन ऐसी बात नहीं है। संभव है कि वह सच में ही क्रोधित हो गया हो; केवल अभिनय ही न कर रहा हो। वह कामना के वश में है, उद्वेग के वश में है, भाव के वश में है। और जब वह सच में उनके आविष्ट होता है तभी उसका अभिनय यर्थाथ मालूम पड़ता है।

तुम्हारे शरीर को नहीं पता हो सकता कि तुम अभिनय कर रहे हो या सच में कर रहे हो। तुमने अपने जीवन में कभी देखा होगा कि तुम क्रोध का केवल अभिनय कर रहे थे और तुम्हारे अनजाने ही क्रोध सच बन गया। या कि तुम उतेजित नहीं थे, सिर्फ पत्नी या प्रेमिका के साथ खेल कर रहे थे। कि अचानक और अनजाने सारा खेल सच हो गया। शरीर उसे पकड़ लेता है।

और शरीर को धोखा दिया जा सकता है। शरीर नहीं जान सकता, विशेषकर कामवासना के प्रसंग में कि वह सच है या अभिनय। तुम कल्पना भी करते हो तो शरीर सोचता है कि वह सच है।

काम केंद्र शरीर का सबसे अधिक कल्पनात्मक केंद्र है। सिर्फ कल्पना से तुम काम के शिखर अनुभव को आर्गाज्म को उपलब्ध हो सकते हो। शरीर नहीं जान सकता कि क्या सच है और क्या झूठ। जब तुम कुछ करने लगते हो तो शरीर सोचता है कि यह सच ओर वह वैसा व्यवहार करने लगता है। साइकोड्रामा ऐसी विधियों पर आधारित है। तुम क्रोधित नहीं हो, सिर्फ क्रोध का अभिनय कर रहे हो। और फिर उससे आविष्ट हो जाते हो।

लेकिन साइकोड्रामा सुंदर है। क्योंकि तुम जानते हो कि मैं महज अभिनय कर रहा हूं। और तब परिधि पर क्रोध यथार्थ हो जाता है और ठीक उसके पीछे तुम छिपकर उसका निरीक्षण कर रहे होते हो। तुम जानते हो कि मैं उद्विग्न नहीं हूं। लेकिन क्रोध है, उद्वेग है, अशांति है। यह दो ऊर्जाओं का युगपत काम करने का अनुभव तुम्हें उनके अतिक्रमण में ले जाता है। और फिर असली क्रोध में भी तुम उसे अनुभव कर सकते हो। जब तुमने जान लिया कि उसे कैसे अनुभव किया जाए तुम वास्तविक स्थितियों में भी अनुभव कर सकते हो।

इस विधि का प्रयोग करो; यह तुम्हारे समग्र जीवन को बदल देगी। और जब तुमने अनुद्विग्न रहना सीख लिया तो संसार तुम्हारे लिए दुःख न रहा। तब कुछ भी तुम्हें भ्रांत नहीं कर सकता है। तब कुछ भी तुम्हें सच में पीड़ित नहीं कर सकता। अब तुम्हारे लिए कोई दुःख न रहा।

और तब तुम एक और काम कर सकत हो। गुरजिएफ यह करता था। वह किसी भी क्षण अपना चेहरा, अपनी मुख मुद्रा बदल सकता था। वह हंस रहा है, मुस्कुरा रहा है। तुम्हारे साथ बैठकर प्रसन्न है। और अचानक वह बिना किसी कारण के ही क्रोधित हो जाएगा। और कहते है कि हव इस कला में इतना निष्णात हो गया था कि वह एक साथ अपने आधे चेहरे से क्रोध और दूसरे आधे चेहरे से मुस्कुराहट प्रकट कर सकता था। अगर उनके दोनों चेहरे के आस पास व्यक्ति बैठे हो तो वह उसे अलग-अलग ही रूप में देखेंगे। एक व्यक्ति कहेगा कि गुरजिएफ कितना सुंदर आदमी है। और दूसरा व्यक्ति कहेगा कि वह बहुत खराब है। वह एक साथ एक को हंसकर देखता था और दूसरे को गुस्से से।

एक बार तुम अपने केंद्र को परिधि से पूरी तरह पृथक करने की विधि का अनुभव कर लो। दोनों अतियां वहां है—विपरीत अतियां। एक बार तुम्हें इन अतियों को बोध हो जाए तो पहली दफा तुम अपने मालिक हुए। अन्यथा दूसरे मालिक है। तुम खुद गुलाम हो। तुम्हारी पत्नी जानती है तुम्हारा बाप जानता है। तुम्हारे बेटे जानते है। तुम्हारे दोस्त जानते है। कि तुम्हें कब हिलाया जा सकता है। तुम्हें कैसे अंशत किया जा सकता है, तुम्हें कैसे खुश किया जा सकता है।

और जब दूसरा तुम्हें सुखी और दुःखी कर सकता है तो तुम मालिक नहीं हो सकते। तुम गुलाम ही हो। कुंजी दूसरे के हाथ में है; बस उसकी एक भाव भंगिमा तुम्हें दुःखी बना सकती है; उसकी एक मुस्कुराहट तुम्हें सुख से भर सकती है। तो तुम दूसरे की मर्जी पर हो; दूसरा तुम्हारे साथ कुछ भी कर सकता है।

और अगर यही स्थिति है तो तुम्हारी सब प्रतिक्रियाएँ बसा प्रतिक्रियाएँ है। उन्हें क्रियाएं नहीं कहा जा सकता है। तुम सिर्फ प्रतिक्रियाँ करते हो, क्रिया नहीं। कोई तुम्हारा अपमान करता है और तुम क्रोधित हो जाते हो। कोई तुम्हारी प्रशंसा करता है और तुम मुस्कुराने लगते हो। फूकर कुप्पा हो जाते हो। तो यह प्रतिक्रिया है, क्रिया नहीं।

बुद्ध एक गांव से गुजर रहे थे। कुछ लोग उनके पास इकट्ठे हो गए; वे सब उनके विरोध में थे। उन्होंने बुद्ध का अपमान किया, उन्हें गालियां दीं। बुद्ध ने सब सुना। और फिर कहा; मुझे समय पर दूसरे गांव पहुंचना है। तो क्या मैं अब आगे जा सकता हूं।

अगर तुमने वह सब कह लिया जा कहने वाले थे। अगर बात खत्म हो गई तो में जाऊं। और यदि कुछ कहने को शेष रह गया हो तो मैं लोटते हुए यहां रूकुंगा, तब तुम आ जाना और कह देना।

वे लोग तो चकित रह गए। उन्हें कुछ समझ में नहीं आया1 वे तो उनका अपमान कर रहे थे। उन्हें गालियां दे रहे थे। तो उन्होंने कहा कि हमें कुछ कहना नहीं है। हम तो बस आपका अपमान कर रहे है। आपको गालियां दे रहे है।

बुद्ध ने कहा: तुम वह कर सकते हो। लेकिन यदि तुम्हें मेरी प्रतिक्रिया की अपेक्षा है तो तुम देरी करके आए। दस वर्ष पूर्व तुम अगर ये शब्द लेकर आए होते तो मैं प्रतिक्रिया करता। लेकिन अब में क्रिया करना सीख गया हूं। मैं अब अपना मालिक हो गया हूं। अब तुम मुझे कुछ करने को मजबूर नहीं कर सकते हो। तुम लौट जाओ। तुम अब मुझे विचलित नहीं कर सकते हो। मुझे अब कुछ भी अशांत नहीं कर सकता है। मैनें अपने केंद्र को जान लिया है।

केंद्र का यह ज्ञान या केंद्र में प्रतिष्ठित होना तुम्हें अपना मालिक बना देता है। अन्यथा तुम गुलाम हो। एक ही मालिक के नहीं, अनेक मालिकों के गुलाम। तब हर कोई तुम्हारा मालिक है, और तुम सारे जगत के गुलाम हो। निश्चित ही तुम पीड़ा में, दुःख में रहोगे। इतने मालिक और वे इतनी दिशाओं में तुम्हें खिंचेंगी। कि तुम अखंड न रह सकोगे। एक न रह सकोगे। और इतने आयामों में खींचे जाने के कारण तुम संताप में रहोगे। वही व्यक्ति संताप का अतिक्रमण कर सकता है जो अपना स्वामी है।

ओशो

विज्ञान भैरव तंत्र, भाग-तीन

प्रवचन-37

विज्ञान भैरव तंत्र विधि—58 (ओशो)

साक्षित्व की दूसरी विधि–

''यह तथा कथित जगत जादूगरी जैसा या चित्र-कृति जैसा भासता है।..........शिव

''यह तथा कथित जगत जादूगरी जैसा या चित्र-कृति जैसा भासता है। सुखी होने के लिए उसे वैसा ही देखो।''

यह सारा संसार ठीक एक नाटक के समान है, इसलिए इसे गंभीरता से मत लो। गंभीरता तुम्हें उपद्रव में डाल देगी। तुम मुसीबत में पड़ोगे। इसे गंभीरता से मत लो। कुछ गंभीर नहीं है। सारा संसार एक नाटक मात्र है।

अगर तुम सारे जगत को नाटक की तरह देख सको तो तुम अपनी मौलिक चेतना को पा लोगे। उस पर धूल जमा हो जाती है। क्योंकि तुम अति गंभीर हो। यह गंभीरता ही समस्या पैदा करती है। और हम इतने गंभीर है कि नाटक देखते हुए भी हम धूल जमा करते रहते है। किसी सिनेमाघर में जाओ और दर्शकों को देखो। फिल्म को मत देखो, फिल्म को भूल जाओ पर्दे की तरफ मत देखो, हाल में जो दर्शक है उन्हें देखो। कोई रो रहा होगा। कोई हंस रहा होगा। किसी की कामवासना उत्तेजित हो रही होगी। सिर्फ लोगो को देखो। वे क्या कर रहे है। उन्हें क्या हो रहा है। पर्दे पर छाया-चित्रों के सिवाय कुछ भी नहीं है—धूप छांव का खेल है। पर्दा खाली है। लेकिन वे उत्तेजित क्यों हो रहे है?

वे हंस रहे है, वे रो रहे है। चित्र मात्र चित्र नहीं है; फिल्म मात्र फिल्म नहीं है। वे भूल गये है कि यह एक कहानी है। उन्होंने इसको गंभीरता से ले लिया है। चित्र जीवित हो उठा है, यर्थाथ हो गया है।

और यही चीज सर्वत्र घट रही है। यह सिनेमाघरों तक ही सीमित नहीं है। अपने चारों और के जीवन को तो देखो; क्या है? इस धरती पर असंख्य लोग रह चूके है। जहां तुम बैठे हो वहां कम सक कम दस लाशों की कब्र है। और वे लोग भी तुम्हारे जैसे ही गंभीर थे। वे अब कहां है? उनका जीवन कहां चला गया? उनकी समस्याएं कहा गई? वे लड़ते थे, एक-एक इंच जमीन के लिए, वह जमीन पड़ी रह गई और वे लोग कही नहीं है।

और मैं यह नहीं कह रहा हूं कि उनकी समस्याएं-समस्याएं नहीं थी। वे थीं; जैसे तुम्हारी समस्याएं-समस्याएं है। लेकिन कहां गई वह समस्याएं? और अगर किसी दिन पूरी मनुष्यता खो जाए तो भी धरती रहेगी। वृक्ष रहेगें । नदिया रहेगी। और सूरज इसी तरह से उगेगा। और पृथ्वी को मनुष्य की गैर-मौजूदगी पर न कोई खेद होगा। न आश्चर्य।

जरा इस विस्तार पर अपनी निगाह को दौडाओं। पीछे देखो, आगे देखो; सभी आयामों को देखा और देखो कि तुम क्या हो। तुम्हारा जीवन क्या है? सब कुछ एक बड़ा स्वप्न जैसा मालूम पड़ेगा। और हर चीज जिसे तुम इस क्षण इतनी गंभीरता से ले रहे हो, अगले क्षण ही व्यर्थ हो जाती है। तुम्हें उसकी याद भी नहीं रहती।

अपने प्रथम प्रेम को स्मरण करो। कितनी गंभीर बात थी वह, जैसे कि जीवन ही उस पर निर्भर करता है। और अब वह तुम्हें स्मरण भी नहीं है। बिलकुल भूल गया है। वैसे ही वे चीजें भी भूल जाएंगी जिन पर तुम आज अपने जीवन को निर्भर समझते हो।

जीवन एक प्रवाह है, वहां कुछ भी नहीं टिकता है। जीवन भागती फिल्म की भांति है। जिसमें हर चीज दूसरी चीज में बदल रहा है। लेकिन इस क्षण वह तुम्हें बहुत गंभीर बहुत महत्वपूर्ण मालूम पड़ता है। और तुम उद्विग्न हो जाते हो।

वह विधि कहती है: ''यह तथा कथित जगत जादूगरी जैसा या चित्र-कृति जैसा भासता है। सुखी होने के लिए उसे वैसा ही देखो।''

भारत में हम इस जगत को परमात्मा की सृष्टि नहीं कहते, हम उसे लीला कहते है। यह लीला की धारणा बहुत सुंदर है। सृष्टि की धारणा गंभीर मालूम पड़ती है। ईसाई और यहूदी ईश्वर बहुत गंभीर है। एक अवज्ञा के लिए आदम को अदन के बग़ीचे से निकाल दिया गया। वह हमारा पिता था; और हम सब उसके कारण दुःख में पड़े है। ईश्वर बहुत गंभीर मालूम पड़ता है। उसकी अवज्ञा नहीं होनी चाहिए। और अगर अवज्ञा होगी तो वह बदला लेगा। और उसका प्रतिशोध अभी तक चला आ रहा है। प्रतिशोध के मुकाबले में पाप इतना बड़ा नहीं लगता है।

सच तो यह है कि आदम ने परमात्मा की बेवकूफी के चलते यह पाप किया। परम पिता परमात्मा ने आदम से कहा कि ज्ञान के वृक्ष के पास मत जाना और उसका फल मत खाना। यह निषध ही निमंत्रण बन गया। वह मनोवैज्ञानिक है। उसे बड़े बग़ीचे में केवल ज्ञान का वृक्ष आकर्षण हो गया। क्योंकि वह निषिद्ध था। कोई भी मनोवैज्ञानिक कहेगा कि भूल परमात्मा की थी। अगर उस वृक्ष के फल को नहीं खाने देना था तो उसकी चर्चा ही नहीं करना थी। तब आदम उस वृक्ष तक कभी नहीं जाता और मनुष्यता अभी भी उसी बग़ीचे में रहती होती। लेकिन इस वचन ने, इस आज्ञा ने कि 'मत खाना' सारा उपद्रव खड़ा कर दिया। इस निषेध ने उपद्रव पैदा किया। क्योंकि आदम ने अवज्ञा की, वह स्वर्ग से निकाल बहार किया गया। और प्रतिशोध कितना बड़ा है।

ईसाई कहते है कि जीसस हमें हमारे पाप से उद्धार दिलाने के लिए, हमें आदम के किए पाप से मुक्त करने लिए सूली पर चढ़ गये। तो ईसाइयों की इतिहास की पूरी धारणा दो व्यक्तियों पर निर्भर है। आदम और जीसस पर। आदम को क्षमा दिलाने के लिए सब यंत्रणा झेली। लेकिन ऐसा नहीं लगता कि ईश्वर ने अब भी क्षमादान दिया हो। जीसस को तो सूली लग गई। लेकिन मनुष्यता अब भी उसी भांति दुःख में है।

पिता के रूप में ईश्वर की धारणा ही गंभीर है, कुरूप है। ईश्वर की भारतीय धारण स्त्रष्टा की नहीं, लीलाधर की है। वह गंभीर नहीं है। वह खेल-खेल रहा है। नियम नहीं है। लेकिन वह खेल के नियम है। उनके संबंध में गंभीर होने की जरूरत नहीं है। कुछ पाप नहीं है। भूल भर है। और तुम भूल के कारण कष्ट में पड़ते हो। परमात्मा तुम्हें दंडित नहीं कर रहा है। लीला की पूरी धारणा जीवन को एक नाटकीय रंग दे देती है। जीवन एक लंबा नाटक हो जाता है। और यह विधि इसी लीला की धारणा पर आधारित है।

''यह तथाकथित जगत जादूगरी जैसा या चित्र-कृति जैसा भासता है। सुखी होने के लिए उसे वैसा ही देखो।''

अगर तुम दुःखी हो तो इसलिए कि तुमने जगत को बहुत गंभीरता से लिया है। और सुखी होने का कोई उपाय मत खोजों, सिर्फ अपनी दृष्टि को बदलों। गंभीर चित से तुम सुखी नहीं हो सकते। उत्सव मनाने वाला चित ही सुखी हो सकता है। इस पूरे जीवन को एक नाटक, एक कहानी की तरह लो ऐसा ही है। और अगर तुम उसे इस भांति ले सके तो तुम दुःखी नहीं होगे। दुःख अति गंभीरता का परिणाम है।

सात दिन के लिए यह प्रयोग करो। सात दिन तक एक ही चीज स्मरण रखो। कि सारा जगत नाटक है। और तुम वही नहीं रहोगे। जो अभी हो। सिर्फ सात दिन के लिए प्रयोग करो। तुम्हारा कुछ खो नहीं जाएगा। क्योंकि तुम्हारे पास खोने के लिए भी तो कुछ चाहिए। तुम प्रयोग कर सकते हो। सात दिन के लिए सब कुछ नाटक समझो। तमाशा समझो।

इन सात दिनों में तुम्हें तुम्हारे बुद्ध स्वभाव की, तुम्हारी आंतरिक पवित्रता की अनेक झलकें मिलेंगी। और इस झलक के मिलने के बाद तुम फिर वही नहीं रहोगे। जो हो। तब तुम सुखी रहोगे। और तुम सोच भी नहीं सकते कि यह सुख किस तरह का होगा। क्योंकि तुमने कोई सुख नहीं जाना। तुमने सिर्फ दुःख की कम-अधिक मात्राएं जानी है। कभी तुम ज्यादा दुःखी थे, और कभी कम। तुम नहीं जानते हो कि सुख क्या है। तुम उसे नहीं जान सकते हो। जब तुम्हारी जगत की धारणा ऐसी है कि तुम उसे बहुत गंभीरता से लेते हो तो तुम नहीं जान सकते कि सुख क्या हे। सुख भी तभी घटित होता है। जब तुम्हारी यह धारणा दृढ़ होती है। कि यह जगत केवल एक लीला है।

इस विधि को प्रयोग में लाओ। और हर चीज को उत्सव की तरह लो, हर चीज को उत्सव मनाने के भाव से करो। ऐसा समझो कि यह नाटक है। कोई असली चीज नहीं है। अगर अपने संबंधों को खेल बना लो बेशक खेल के नियम है; खेल के लिए नियम जरूरी है। विवाह नियम है। तलाक नियम है। उनके बारे में गंभीर मत होओ। वे नियम है और एक नियम को जन्म देता है। लेकिन उन्हें गंभीरता से मत लो फिर देखो कि कैसे तत्काल तुम्हारे जीवन का गुणधर्म बदल जाता है।

आज रात अपने घर जाओ और अपनी पत्नी या पति या बच्चों के साथ ऐसे व्यवहार करो जैसे कि तुम किसी नाटक में भूमिका निभा रहे हो। और फिर उसका सौंदर्य देखो अगर। तुम भूमिका निभा रहे हो तो तुम उसमे कुशल होने की कोशिश करोगे। लेकिन उद्विग्न नहीं होगे। उसी कोई जरूरत नहीं है। तुम अपनी भूमिका निभा कर सोने चले जाओगे। लेकिन स्मरण रहे कि यह अभिनय है। और सात दिन तक इसका सतत ख्याल रखे। तब तुम्हें सुख उपलब्ध होगा। और जब तुम जान लोगे कि क्या सुख है तो फिर दुःख में गिरने की जरूरत नहीं रही। क्योंकि यह तुम्हारा ही चुनाव है।

तुम दुःखी हो, क्योंकि तुमने जीवन के प्रति गलत दृष्टि चूनी है। तुम सुखी हो सकते हो। अगर दृष्टि सम्यक हो जाए। बुद्ध सम्यक दृष्टि को बहुत महत्व देते है। वे सम्यक दृष्टि को ही आधार बनाते है। बुनियाद बनाते है। सम्यक दृष्टि क्या है? उसकी कसौटी क्या है ?

मेरे देखे कसौटी यह है: ''जो दृष्टि सुखी करे वह सम्यक दृष्टि है। और जो दृष्टि तुम्हें दुखी पीडित बनाए वह असम्यक दृष्टि है। और कसौटी बाह्य नहीं है। आंतरिक है। और कसौटी तुम्हारा सुख है।

ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र, भाग-तीन

प्रवचन-37

विज्ञान भैरव तंत्र विधि—59 (ओशो)

साक्षित्व की तीसरी विधि–

’प्रिय, न सुख में और न दुःख में, बल्कि दोनों के मध्य में अवधान को स्थित करो।‘’

”प्रिय, न सुख में और न दुःख में, बल्कि दोनों के मध्य में अवधान को स्थित करो।‘’
प्रत्येक चीज ध्रुवीय है। अपने विपरीत के साथ है। और मन एक ध्रुव से दूसरे ध्रुव पर डोलता रहता है। कभी मध्य में नहीं ठहरता।

क्या तुमने कोई ऐसा क्षण जाना है जब तुम न सुखी हो और न दुखी? क्या तुमने कोई ऐसा क्षण जाना है जब तुम न स्वास्थ थे न बीमार? क्या तुमने कोई ऐसा क्षण जाना है जब तुम न यह थे न वह। जब तुम ठीक माध्य में थे, ठीक बीच में थे?

मन अविलंब एक अति से दूसरी अति पर चला जाता है। अगर तुम सुखी हो तो देर-अबेर तुम दुःख की तरफ गति कर जाओगे। और शीध्र गति कर जाओगे। सुख विदा हो जाएगा। और तुम दुःख में हो जाओगे। अगर तुम्हें अभी अच्छा लग रहा है तो देर अबेर तुम्हें बुरा लगने लगेगा। और तुम बीच में कहीं नहीं रुकते, इस छोर से सीधे उस छोर पर चले जाते हो। घड़ी के पैंडुलम की तरह तुम बांए से दाएं और बाएं डोलते रहते हो। और पैंडुलम डोलता ही रहता है।

एक गुह्म नियम है। जब पैंडुलम बायी और जाता है तो लगता तो है कि बायी और जा रहा है। लेकिन सच में तब वह दायी और जाने के लिए शक्ति जुटा रहा है। और वैसे ही जब वह दायी और जा रहा है तो बायी और जाने के लिए शक्ति जुटा रहा है। तो जैसा दिखाई पड़ता है वैसा ही नहीं है। जब तुम सुखी हो रहे हो तो तुम दुःखी होने के लिए शक्ति जुटा रहे हो। और जब तुम्हें हंसते देखता हूं तो जानता हूं कि रोने का क्षण दूर नहीं है।

भारत के गांवों में माताएं यह जानती है। जब कोई बच्चा बहुत हंसने लगता है तो वे कहती है कि उसका हंसना बंद करो, अन्यथा वह रोएगा। वह होने ही वाला है। अगर कोई बच्चा बेहद खुश हो तो उसका अगला कदम दुःख में पड़ने ही वाला है। इसलिए माताएं उसे रोकती है, अन्यथा वह दुःखी होगा।

लेकिन यही नियम विपरीत ढंग से भी लागू होता है। और लोग यह नहीं जानते है। कोई बच्चा रोता हे तो तुम उसे रोने से रोकते हो तो तुम उसका रोना ही नहीं रोकते हो, तुम उसका लगता कदम भी रोक रहे हो। अब वह सुखी भी नहीं हो पाएगा। बच्चा जब रोता है तो उसे रोने दो। बच्चा जब रोता है तो उसे मदद दो कि और रोंए। जब तक उसका रोना समाप्त होगा। वह शक्ति जुटा लेगा। वह सुखी हो सकेगा।

अब मनोवैज्ञानिक कहते है कि जब बच्चा रोता-चीखता हो तो उसे रोको मत, उसे मनाओ मत, उसे बहलाओ मत। उसके ध्यान को रोने से हटाकर कहीं अन्यत्र ले जाने की कोशिश मत करो, उसे रोना बंद करने के लिए रिश्वत मत दो। कुछ मत करो; बस उसके पास मौन बैठे रहो और उसे रोने दो। चिल्लाने दो। तब वह आसानी से सुख की और गति कर पाएगा। अन्यथा न वह रो सकेगा। और न सुखी हो सकेगा।

हमारी यह स्थिति है। हम कुछ नहीं कर पाते है। हम हंसते है तो आधे दिल से और रोते है तो आधे दिल से। लेकिन यही मन का प्राकृतिक नियम है; वह एक छोर से दूसरे छोर पर गति करता रहता है। यह विधि इस प्राकृतिक नियम को बदलने के लिए है।

''प्रिये, न सुख में और न दुःख में, बल्कि दोनों के मध्य में अवधान को स्थिर करो।''

किन्हीं भी ध्रुवों को, विपरीतताओं को चुनो और उनके मध्य में स्थित होने की चेष्टा करो। इस मध्य में होने के लिए तुम क्या करोगे। मध्य में कैसे होओगे?

एक बात कि जब दुख में होते हो तो क्या करते हो? जब दुःख आता है तो तुम उससे बचना चाहते हो। भागना चाहते हो। तुम दुःख नहीं चाहते। तुम उससे भागना चाहते हो। तुम्हारी चेष्टा रहती हे कि तुम उससे विपरीत को पा लो। सुख को पा लो। आनंद को पा लो। और जब सुख आता है तो तुम क्या करते हो? तुम चेष्टा करते हो कि सुख बना रहे। ताकि दुःख न आ जाए; तुम उससे चिपके रहना चाहते हो। तुम सुख को पकड़कर रखना चाहते हो और दुःख से बचना चाहते हो। यही स्वाभाविक दृष्टिकोण है, ढंग है।

अगर तुम इस प्राकृतिक नियम को बदलना चाहते हो, उसके पास जाना चाहते हो, तो जब दुःख आए तो उससे भागने की चेष्टा मत करो; उसके साथ रहो। उसको भोगो। ऐसा करके तुम उसकी पूरी प्राकृतिक व्यवस्था को अस्तव्यस्त कर दोगे।

तुम्हें सिरदर्द है; उसके साथ रहो। आंखें बंद कर लो और सरदर्द पर ध्यान करो, उसके साथ रहो। कुछ भी मत करो; बस साक्षी रहो। उससे भागने की चेष्टा मत करो। और जब सुख आए और तुम किसी क्षण विशेष रूप से आनंदित अनुभव करो तो उसे पकड़कर उससे चिपक मत जाओ। आंखें बंद कर लो और उसके साथ साक्षी हो जाओ।

सुख को पकड़ना और दुःख से भागना भूल भरे चित के स्वाभाविक गुण है। और अगर तुम साक्षी रह सको तो देर अबेर तुम मध्य को उपलब्ध हो जाओगे। प्राकृतिक नियम तो यही है कि एक से दूसरी अति पर आते-जाते रहो। अगर तुम साक्षी रह सके तो तुम मध्य में रह सकोगे।

बुद्ध ने इसी विधि के कारण अपने पूरे दर्शन को मज्झम निकाय—मध्य मार्ग कहा है। वे कहते है कि सदा मध्य में रहो; चाहे जो भी विपरीतताएं हों, तुम सदा मध्य में रहो। और साक्षी होने से मध्य में हुआ जा सकता है। जि क्षण तुम्हारा साक्षी खो जाता है तुम या तो आसक्त हो जाते हो या विरक्त। अगर तुम विरक्त हुए तो दूसरी अति पर चले जाओगे और आसक्त हुए तो इस अति पर बने रहने की चेष्टा करोगे। लेकिन तब तुम कभी मध्य में नहीं होगे। सिर्फ साक्षी बनो; न आकर्षित होओ और न विकर्षित ही।

सिरदर्द है तो उसे स्वीकार करो। वह तथ्य है। जैसे वृक्ष है, मकान है, रात है, वैसे ही सिरदर्द है। आँख बंद करो और उसे स्वीकार करो। उससे बचने की चेष्टा मत करो। वैसे ही तुम सुखी हो तो सुख के तथ्य को स्वीकार करो। उससे चिपके रहने की चेष्टा मत करो। और दुःखी होने का प्रयत्न भी मत करो; कोई भी प्रयेत्न मत करो। सुख आता है तो आने दो; दुःख आता है तो आने दो। तुम शिखर पर खड़े दृष्टा बने रहो। जो सिर्फ चीजों को देखता है। सुबह आती है। शाम आती है। फिर सूरज उगता है। और डूबता है। तारे है और अँधेरा है, फिर सूर्योदय—और तुम शिखर पर खड़े दृष्टा हो।

तुम कुछ कर नहीं सकते; तुम सिर्फ देखते रहते हो। सुबह आती है, इस तथ्य को तुम भलीभाँति देख लेते हो और तुम जानते हो कि अब सांझ जाएगी। क्योंकि सांझ सुबह के पीछे-पीछे आती है। वैसे ही जब सांझ आती है। तो तुम उसे भी भलीभाँति देख लेते हो और तुम जानते हो कि अगर सुबह आएगी, क्योंकि सुबह सांझ के पीछे-पीछे आती है। जब दुःख है तो तुम उसके भी साक्षी हो। तुम जानते हो कि दुःख आया है, देर अबेर वह चला जाएगा। और उसका विपरीत ध्रुव आ जाएगा और जब सुख आता है। तो तुम जानते हो कि वह सदा नहीं रहेगा। दुःख कहीं पास ही छिपा होगा। आता ही होगा। तुम खुद द्रष्टा ही बने रहते हो।

अगर तुम आकर्षण और विकर्षण के बिना, लगाव और दुराव के बिना देखते रहे तो तुम मध्य में आ जाओगे। और जब पैंडुलम बीच में ठहर जाएगा। तो तुम पहली दफा देख सकोगे कि संसार क्या है। जब तक तुम दौड़ रहे हो, तुम नहीं जान सकते कि संसार क्या है। तुम्हारी दौड़ सब कुछ को भ्रांत कर देती है। धूमिल कर देती है। और जब दौड़ बंद होगी तो तुम संसार को देख सकोगे। तब तुम्हें पहली बार सत्य के दर्शन होंगे। अकंप मन ही जानता है कि सत्य क्या है। कंपित मन सत्य को नहीं जान सकता।

तुम्हारा मन ठीक कैमरे की भांति है। अगर तुम चलते हुए फोटो लेते हो तो जो भी चित्र बनेगा वह धुंधला-धुंधला ही होगा। असपष्ट होगा। विकृत होगा। कैमरे को हिलना नहीं चाहिए। कैमरा हिलेगा तो चित्र बिगड़ेगा ही।

तुम्हारी चेतना एक ध्रुव से दूसरे ध्रुव पर गति करती रहती है। और इस भांति तुम जो सत्य जानते हो वह भ्रांति है, दुख स्वप्न है। तुम नहीं जानते हो कि क्या-क्या है। सब भ्रम है, सब धुआं-धुंआ है। सत्य से तुम वंचित रह जाते हो। सत्य को तुम तब जानते हो जब तुम मध्य में ठहर जाता है। और तुम्हारी चेतना वर्तमान के क्षण में होती है। केंद्रित होती है। अचल और अकंप चित ही सत्य को जानता है।

''प्रिये, न सुख में और न दुःख में, बल्कि दोनों के मध्य में अवधान को स्थिर करो।''

ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र, भाग-तीन

प्रवचन-37

विज्ञान भैरव तंत्र विधि—60 (ओशो)

साक्षित्व की चौथी विधि–

''विषय और वासना जैसे दूसरों में है वैसे ही मुझमें है

''विषय और वासना जैसे दूसरों में है वैसे ही मुझमें है। इस भांति स्वीकार करके उन्हें रूपांतरित होने दो।''

यह विधि बहुत सहयोगी हो सकती है। जब तुम क्रोधित होते हो तो तुम सदा अपने क्रोध को उचित मानते हो। लेकिन जब कोई दूसरा क्रोधित होता है तो तुम उसकी सदा आलोचना करते हो। तुम्हारा पागलपन स्वाभाविक है; दूसरे का पागलपन विकृति है। तुम जो भी कहते हो वह शुभ है—शुभ नहीं तो कम से कम उसे करना जरूरी था। तुम अपने कृत्य के लिए सदा कुछ औचित्य खोज लेते हो, उसे तर्कसम्मत बना लेते हो। और जब वहीं काम दूसरा करता है तो वही औचित्य, वहीं तर्क लागू नहीं होता है।

तुम क्रोध करते हो तो कहते हो कि दूसरे के हित के लिए यह जरूरी था; अगर मैं क्रोध न करता तो दूसरा बर्बाद ही हो जाता। वह किसी बुरी आदत का शिकार हो जाता है, इसलिए उसे दंड देना जरूरी था; यह उसके भले के लिए था। लेकिन जब दूसरा तुम पर क्रोध करता है तो वही तर्क सारणी उस पर नहीं लागू की जाती है। दूसरा पागल है, दूसरा दुष्ट है।

हमारे मापदंड सदा दोहरे है; अपने लिए एक मापदंड है और शेष सबके लिए दूसरे मापदंड है। यह दोहरे मापदंड वाला मन सदा दुःख में रहेगा। यह मन ईमानदार नहीं है। सम्यक नहीं है। और जब तक तुम्हारा मन, ईमानदार नहीं होता, तुम्हें सत्य की झलक नहीं मिल सकती है। और एक ईमानदार मन ही दोहरे मापदंड से मुक्त हो सकता है।

जीसस कहते है: दूसरों के साथ वह व्यवहार मर करो। जो व्यवहार तुम न चाहोगे कि तुम्हारे साथ किया जाए।

यह विधि एक मापदंड की धारणा पर आधारित है।

तुम अपवाद नहीं हो; यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति सोचता है कि मैं अपवाद हूं। अगर तुम सोचते हो कि मैं अपवाद हूं तो भलीभाँति जान लो कि ऐसे ही हर सामान्य मन सोचता है। यह जानना कि मैं सामान्य हूं जगत में सबसे असामान्य घटना है।

किसी न सुजुकी से पूछा कि तुम्हारे गुरु में असामान्य क्या था? सुजुकी स्वयं झेन गुरु था। सुजुकी ने कहा कि उनके संबंध में मैं एक चीज कभी न भूलूंगा कि मैंने कभी ऐसा व्यक्ति नहीं देखा जो अपने को इतना सामान्य समझता हो। वे बिलकुल सामान्य थे और वही उनकी सबसे बड़ी असामान्यता थी। अन्यथा साधारण व्यक्ति भी सोचता है कि मैं असामान्य हूं, अपवाद हूं।

लेकिन कोई व्यक्ति असामान्य नहीं है। और तुम अगर यह जान लो तो तुम असामान्य हो जाते हो। हर आदमी दूसरे आदमी जैसा है। जो वासनाएं तुम्हारे भीतर चक्कर लगा रही है वे ही दूसरों के भीतर घूम रही है। लेकिन तुम अपनी कामवासना को प्रेम कहते हो और दूसरों के प्रेम को कामवासना कहते हो। तुम खुद जो भी करते हो, उसका बचाव करते हो तुम कहते हो कि वह शुभ काम है। इसलिए कहता हूं। और वही काम जब दूसरे करते है तो वह वही नहीं रहते, वह शुभ नहीं रहते।

और यह बसत व्यक्तियों तक ही सीमित नहीं है। जाति और राष्ट्र भी यही करते है। अगर भारत अपनी सेना बढ़ाता है तो वह सुरक्षा का प्रयत्न है और जब चीन अपनी सेना को मजबूत करता है तो वह आक्रमण की तैयारी हे। दुनिया की हर सरकार अपने सैन्य संस्थान को सुरक्षा संस्थान कहती है। तो फिर आक्रमण कौन करता है? जब सभी सुरक्षा में लगे है तो आक्रामक कौन है? अगर तुम इतिहास देखोगें तो तुम्हें कोई आक्रामक नहीं मिलेगा। हां, जो हार जाते है वह आक्रामक करार दे दिए जाते है। पराजित लोग सदा आक्रामक माने गए है। क्योंकि वे इतिहास नहीं लिख सकते है। इतिहास तो विजेता लिखते है।

अगर हिटलर विजयी हुआ होता तो इतिहास दूसरा होता। तब वह आक्रामक नहीं, संसार का रक्षक माना जाता। तब चर्चिल, रूजवेल्ट और उनके मित्र गण आक्रामक माने जाते। और कहा जाता कि उन्हें मिटा डालना अच्छा हुआ। लेकिन क्योंकि हिटलर हार गया। वह आक्रामक हो गया। तो न सिर्फ व्यक्ति, बल्कि जाति और राष्ट्र भी वही तर्क पेश करते है; अपने को औरों से भिन्न बताते है।

कोई भी भिन्न नहीं है। धार्मिक चित वह है जो जानता है कि प्रत्येक व्यक्ति समान है। इसलिए तुम जो तर्क अपने लिए खोज लेते हो वही दूसरों के लिए भी उपयोग करो। और अगर तुम दूसरों की आलोचना करते हो तो उसी आलोचना को अपने पर भी लागू करो। दोहरे मापदंड मत गढ़ो। एक मापदंड रखने से तुम पूरी तरह रूपांतरित हो जाओगे। एक मापदंड तुम्हें ईमानदार बनाएगा। और पहली दफा तुम सत्य को सीधा देखोगें जैसा वह है।

''विषय और वासना जैसे दूसरों में है वैसे ही मुझमें है। इस भांति स्वीकार करके उन्हें रूपांतरित होने दो।''

तुम उन्हें स्वीकार कर लो और वे रूपांतरित हो जाएंगी। लेकिन हम क्या कर रहे है? हम स्वीकार करते है कि विषय-वासना दूसरों में है। जो-जो गलत है वह दूसरों में है और जो-जो सही है वह तुम में है। तब तुम रूपांतरित कैसे होगे? तुम तो रूपांतरित हो ही। तुम सोचते हो कि मैं तो अच्छा ही हूं। दूसरे सब लोग बुरे है। रूपांतरण की जरूरत संसार को है। तुम्हें नहीं।

इसी दृष्टिकोण के कारण नेता, क्रांतियां और पैगंबर पैदा होते है। वे घर के मुँडेरों पर चढ़कर चिल्लाते है। कि दुनियां को बदलना है। कि इंकलाब लाना है। हम क्रांति पर क्रांति किए जाते है। और कुछ भी नहीं बदलता है। मनुष्य वही का वहीं है। दुनियां पुराने दुखों से ही ग्रस्त रहती है। चेहरे और नाम बदल जाते है; पर दूःख बना रहता है।

दुनिया को बदलने की बात नहीं है। तुम गलत हो। प्रश्न है कि तुम कैसे बदलों धार्मिक प्रश्न यह है कि मैं कैसे बदलूं? दूसरों को बदलने की बात राजनीति है। राजनीतिज्ञ सोचता है कि मैं तो बिलकुल ठीक हूं, कि मैं तो आदर्श हूं, जैसा कि सारी दुनियां को होना चाहिए। वह अपने को आदर्श मानता है। वह आदर्श पुरूष है। और उसका काम दुनिया को बदलना है।

धार्मिक व्यक्ति जो कु छ भी दूसरों से देखता है उसे अपने भीतर भी देखता है। अगर हिंसा है तो वह सोचता है कि यह हिंसा मुझमें है या नहीं। अगर लोभ है, अगर उसे कहीं लोभ दिखाई पड़ता है तो उसका पहला ख्याल यह होता है कि यह लोभ मुझमें है या नहीं। और जितना ही खोजता है वह पाता है कि मैं ही सब बुराई का स्त्रोत हूं। तब फिर प्रश्न उठता ही नहीं। कि संसार कैसे बदले। तब फिर प्रश्न यह है कि अपने को कैसे बदला जाए। और बदलाहट उसी क्षण लगती है। जब तुम एक मापदंड अपनाते हो। उसे अपनाते ही तुम बदलने लगते हो।

दूसरों की निंदा मत करो। मैं यह नहीं कह रहा हूं कि अपनी निंदा करो। नहीं, बस दूसरों की निंदा मत करो। और अगर तुम दूसरों की निंदा करते हो तो तुम्हें उनके प्रति गहन करूणा का भा होगा। क्योंकि सब की समस्याएं समान है। अगर कोई पाप करता है—समाज की नजर में जो पाप है—तो तुम उसकी निंदा करने लगते हो। तुम यह नहीं सोचते हो कि तुम्हारे भीतर भी उस पाप के बीज पड़े है। अगर कोई हत्या करता है तो तुम उसकी निंदा करते हो।

लेकिन क्या तुमने कभी किसी की हत्या करने का विचार नहीं किया है? क्या उसका बीज, उसकी संभावना तुम्हारे भीतर भी नहीं छिपी है। जि आदमी ने हत्या की है वह एक क्षण पूर्व हत्यारा नहीं था। लेकिन उसका बीज उसमें था। वह बीज तुममें भी है। एक क्षण बाद कौन जानता है कि तुम भी हत्यारे हो सकते हो। उसकी निंदा मत करो। बल्कि स्वीकार करो। तब तुम्हें उसके प्रति गहन करूणा होगी। क्योंकि उसने जो कुछ किया है वह कोई भी कर सकता है। तुम भी कर सकते हो।

निंदा से मुक्त चित में करूणा होती है। निंदा रहित चित में गहन स्वीकार होता है। वह जानता है कि मनुष्यता ऐसी है, कि मैं भी ऐसा ही हूं, तब सारा जगत तुम्हारा प्रतिबिंब बन जाएगा; वह तुम्हारे लिए दर्पण का काम देगा। तब प्रत्येक चेहरा तुम्हारे लिए आईना होगा; तुम प्रत्येक चेहरे में अपने को ही देखोगें।

''विषय और वासना जैसे दूसरों में है वैसे ही मुझमें है। इस भांति स्वीकार करके उन्हें रूपांतरित होने दो।''

स्वीकार ही रूपांतरण बन जाता है। यह समझना कठिन है। क्योंकि हम सदा इनकार करते है और उसके बावजूद हम बिलकुल नहीं बदल पाते है। तुममें लोभ है, लेकिन तुम उसे अस्वीकार करते हो। कोई भी अपने को लोभी मानने को राज़ी नहीं है। तुम कामुक हो, लेकिन तुम उसे अस्वीकार करते हो। कोई भी अपने को कामुक मानने को राज़ी नहीं है। तुम क्रोधी हो, लेकिन तुम उसे इनकार कर देते हो। तुम एक मुखौटा ओढ़ लेते हो। और उसे उचित बताने की चेष्टा करते हो। तुम कभी नहीं सोचते कि मैं क्रोधी हूं।

लेकिन अस्वीकार से कभी कोई रूपांतरण नहीं होता। उससे चीजें दमित हो जाती है। लेकिन जो चीज दमित होती है वह और भी शक्तिशाली हो जाती है। वह तुम्हारी जड़ों तक पहुंच जाती है। तुम्हारे अचेतन में गहराई तक उतर जाती है। वहां से काम करने लगती है। और अचेतन के उस अंधेरे में वह वृति और भी शक्ति शाली हो जाती है। और अब तुम उसे और भी नहीं स्वीकार कर सकते, क्योंकि तुम्हें उसका बोध भी नहीं है।

स्वीकृति सबको ऊपर ले आती है। दमन करने की जरूरत नहीं है। तुम जानते हो कि मैं लोभी हूं। तुम जानते हो कि मैं क्रोधी हूं, तुम जानते हो कि मैं कामुक हूं। तुम उन वृतियां को बिना किसी निंदा के स्वाभाविक तथ्य की तरह स्वीकार कर लेते हो। उन्हें दमित करने की जरूरत नहीं है। वे वृतियां मन की सतह पर आ जाती है। और वहां से उन्हें बहुत आसानी से विसर्जित किया जा सकता है। गहरे अचेतन में उनका विसर्जन संभव नहीं है। और जब वे सतह पर होती है तो तुम उनके प्रति होश पूर्ण

होते हो; जब वे अचेतन में होती है तो तुम उनके प्रति बेहोश बने रहते हो। और उस रोग से ही मुक्ति संभव है जिसके प्रति तुम होश पूर्ण हो; जिसके प्रति तुम बेहोश हो उस रोग से मुक्त नहीं हो सकती।

प्रत्येक चीज को सतह पर ले आओ। अपनी मनुष्यता को स्वीकार करो; अपनी पशुता को स्वीकार करो। जो भी है उसे बिना किसी निंदा के स्वीकार करो। लोभ है; उसे अलोभ में बदलने की चेष्टा मत करो। तुम उसे नहीं बदल सकते हो। और अगर तुम उसे अलोभ बनाने की चेष्टा करोगे तो तुम उसका दमन करोगे। तुम्हारा अलोभ और कुछ नहीं, केवल दूसरे ढंग का लोभ है। अगर तुम लोभ को बदलने की कोशिश करोगे तो क्या करोगे? लोभी मन अलोभ के आदर्श के प्रति तभी आकर्षित होता है जब उसका कोई और लोभ उससे साधने वाला हो।

अगर कोई तुम्हें कहता है कि यदि तुम अपने सारे धन का त्याग कर दो तो तुम्हें परमात्मा के राज्य में प्रवेश मिल जाएगा। तो तुम सदा त्याग करने को भी तैयार हो जाओगे। अब एक नया लोभ संभव हो गया। यह सौदा है। तो लोभ को अलोभ नहीं बनाना है। लोभ का अतिक्रमण करना है। तुम उसे बदल नहीं सकते। तो लोभ को अलोभ मत बनाओ। तुम एक चीज को दूसरी चीज में बदल नहीं सकते हो। केवल सिर्फ सजग हो सकते हो। तुम सिर्फ स्वीकार कर सकते हो। लोभ को लोभ की तरह स्वीकार करो।

स्वीकार का यह अर्थ नहीं है कि उसे रूपांतरित करने की जरूरत नहीं है। स्वीकार का इतना ही अर्थ है कि तुम तथ्य को, स्वाभाविक तथ्य को स्वीकार करते हो; जैसा वह है वैसा ही स्वीकार करते हो। तब जीवन में यक जानकर गति करो कि लोभ है। तुम जो भी करो यह स्मरण रखकर करो कि लोभ है। यह बोध तुम्हें रूपांतरित कर देगा। यह रूपांतरित करता है। क्योंकि बोधपूर्वक तुम लोभी नहीं हो सकते हो। बोधपूर्वक तुम क्रोधी नहीं हो सकते। क्रोध के लिए, लोभ के लिए, हिंसा के लिए, मूर्च्छा बुनियादी शर्त है।

यह वैसा ही है जैसे तुम जान-बूझकर जहर नहीं खा सकते। जान बूझकर तुम अपना हाथ आग में नहीं डाल सकते हो। अनजाने ही ऐसा कर सकते हो। अगर तुम्हें नहीं पता है कि आग क्या है। तो ही तुम उसके हाथ डाल सकते हो। यदि जानते हो। अगर तुम्हें नहीं पता है कि आग क्या है तो ही तुम उसके हाथ डाल सकते हो। यदि जानते हो कि आग जलाती है। तो तुम उसमें हाथ नहीं डाल सकते।

जैसे-जैसे तुम्हारा ज्ञान, तुम्हारा बोध, वैसे-वैसे लोभ तुम्हारे लिए आग बन जाएगा। क्रोध जहर बन जायेगा। तब वे बस असंभव हो जाते है। और दमन न हो तो वे सदा के लिए विसर्जित हो जाते है। और जब लोभ अलोभ के आदर्श के बिना विसर्जित होता है। तो उसका अपना ही सौंदर्य है। जब हिंसा अहिंसा के आदर्श के बिना विसर्जित होती है तो उसका अपना ही सौंदर्य है।

अन्यथा जो व्यक्ति आदर्श के अनुसार अहिंसक बनता है वह गहरे में हिंसक, अति हिंसक बना रहता है। वह हिंसा उसमें छिपी रहती है। और तुम्हें उसकी झलक उसकी अहिंसा में भी मिल सकती है। वह अपनी अहिंसा को अपने पर और दूसरों पर बहुत हिंसक ढंग से थोपेगा। उसकी हिंसा सूक्ष्म ढंग ले लेगी।

यह सूत्र कहता है कि स्वीकार रूपांतरण है, क्योंकि स्वीकार से बोध संभव होता है।

ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र, भाग-तीन

प्रवचन-37

विज्ञान भैरव तंत्र विधि—61 (ओशो)

''जैसे जल से लहरें उठती है और अग्नि से लपटें, वैसे ही सर्वव्यापक हम से लहराता है।''

जैसे जल से लहरें उठती है और अग्नि से लपटें,……..शिव

पहले तो यह समझने की कोशिश करो लहर क्या है, और तब तुम समझ सकते हो कि कैसे यह चेतना की लहर तुम्हें ध्यान में ले जाने में सहयोगी हो सकती है।

तुम सागर में उठती लहरों को देखते हो। वे प्रकट होती है; एक अर्थ में वे है, और फिर भी किसी गहरे अर्थ में वे नहीं है। लहर के संबंध में समझने की यह पहली बात है। गहरे अर्थ में प्रकट होती है; एक अर्थ में लहर है। लेकिन किसी गहरे अर्थ में लहर नहीं है। गहरे अर्थ में सिर्फ सागर है। सागर के बिना लहर नहीं हो सकती। और जब लहर है भी तो भी यह सागर ही है। लहर रूप भर है। सत्य नहीं है। सागर सत्य है। लहर केवल रूप है।
भाषा के कारण अनेक समस्याएं उठ खड़ी होती है। क्योंकि हम कहते है लहर, इससे लगता है कि लहर कुछ है। बेहतर हो कि हम लहर न कहकर लहराना कहें। लहर नहीं, लहराना ही है। वह कोई वस्तु नहीं है, एक क्रिया है। वह एक गति है, प्रक्रिया है; वह कोई पदार्थ नहीं है। वह कोई तत्व सत्य नहीं है। पदार्थ या तत्व तो सागर है; लहर एक रूप भर है।

सागर शांत हो सकता है। तब लहरें विलीन हो जाएंगी। लेकिन सागर तो रहेगा। सागर शांत हो सकता है। या बहुत सक्रिय और क्षुब्ध हो सकता है; या सागर निष्क्रिय हो सकता है। लेकिन तुम्हें कोई शांत लहर देखने को नहीं मिलेगी। लहर सक्रियता है, सत्य नहीं। जब सक्रियता है तो लहर है; यह लहराना है, गति है, हलन चलन है—एक साधारण सी हलचल। लेकिन जब शांति आती है। जब निष्क्रियता आती है तो लहर नहीं रहती। लेकिन सागर रहता है। दोनों अवस्थाओं में सागर सत्य है। लहर उसका एक खेल है। लहर उठती है। खो जाती है। लेकिन सागर रहता है।

दूसरी बात लहरें अलग-अलग दिखती है। प्रत्येक लहर का अपना व्यक्तितत्व है। अनूठा औरों से भिन्न। कोई दो लहरें समान नहीं होती। कोई लहर बड़ी होती है। कोई छोटी उनके अपने-अपने विशिष्ट लक्षण होते है। प्रत्येक लहर का निजी ढंग होता है। और निश्चित ही प्रत्येक लहर दूसरे से भिन्न होती है। एक लहर उठ रही होती है, दूसरी मिट रही होती है। जब एक उठती है

तो दूसरी गिरती है। दोनों एक नहीं हो सकती। क्योंकि एक जन्म ले रही होती है और दूसरी मिट रही होती है। फिर भी दोनों लहरों के पीछे जो सत्य है वह एक ही है।

लेकिन संभव है कि उठती हुई लहर मिटने वाली लहर से ऊर्ज ग्रहण कर रही हो। मिटने वाली लहर अपनी मृत्यु के द्वारा उसे उठने में मदद कर रही हो। बिखरने वाली लहर उस लहर के लिए कारण बन सकती है जो उठ रही है। बहुत गहरे में वि एक ही सागर से जुड़ी है। वे भिन्न नहीं है। वे पृथक नहीं है। उनका व्यक्तित्व झूठ है, भ्रामक है। वे जुड़ी है। उनका द्वैत भासता है। लेकिन है नहीं। उनका अद्वैत सत्य है।

अब सूत्र को फिर से पढ़ता हूं: ''जैसे जल से लहरें उठती है, और अग्नि से लपटें, वैसे ही सर्वव्यापक हम से लहराता है।''

हम जागतिक सागर में लहर मात्र है। इस पर ध्यान करो; इस भाव को अपने भीतर खूब गहरे उतरने दो। अपनी श्वास को उठती हुई लहर की तरह महसूस करना शुरू करो। तुम श्वास लेते हो; तुम श्वास छोड़ते हो। जो श्वास अभी तुम्हारे अंदर जा रही है वह एक क्षण पहले किसी दूसरे की श्वास थी। और जो श्वास अभी तुम्हारे से बहार जा रही है। वही श्वास अगले क्षण किसी दूसरी की श्वास हो जायेगी। श्वास लेना जीवन के सागर में लहरों के उठनें-गिरने जैसा ही है। तुम पृथक नहीं हो, बस लहर हो। गहराई में तुम एक हो। हम सब इकट्ठे है, संयुक्त है। वैयक्तिकता झूठी है। भ्रामक है। इसलिए अहंकार एकमात्र बाधा है। वैयक्तिकता झूठी है। वह भासती है। लेकिन सत्य नहीं है। सत्य तो अखंड है, सागर है, अद्वैत है।

यही कारण है कि प्रत्येक धर्म अहंकार के विरोध में है। जो व्यक्ति कहता है कि ईश्वर नहीं है वह अधार्मिक न भी हो, लेकिन जो कहता है कि मैं हूं वह अवश्य अधार्मिक है।

गौतम बुद्ध नास्तिक थे; वे किसी ईश्वर में विश्वास नहीं करते थे। महावीर वर्धमान नास्तिक थे। उन्हें भी किसी ईश्वर में विश्वास नहीं था। लेकिन वे पहुंच गए, उन्होंने पाया; वे समग्रता को, पूर्ण को उपलब्ध हुए। अगर तुम्हें किसी परमात्मा में विश्वास नहीं है तो तुम अधार्मिक नहीं हो। क्योंकि धर्म के लिए ईश्वर बुनियादी नहीं है। धर्म के लिए निरहंकार बुनियादी है। और अगर तुम ईश्वर में विश्वास भी करते हो, लेकिन अहंकार भरे मन सक विश्वास करते हो तो तुम अधार्मिक हो। अहंकार रहित मन के लिए ईश्वर में विश्वास की भी जरूरत नहीं है। निरहंकारी व्यक्ति अपने आप ही, सहज ही परमात्मा में लीन हो जाता है। निरहंकारी होकर तुम लहर से नहीं चिपके रह सकते हो; तुम्हें सागर में गिरना ही होगा। अहंकार लहर से चिपका रहता है। जीवन को सागर की भांति देखो और अपने को लहर मात्र समझो; और इस भाव को अपने भीतर उतरने दो।

इस विधि को तुम कई ढंग से उपयोग में ला सकते हो। श्वास लेते हो तो भाव करो कि सागर ही तुम्हारे भीतर श्वास ले रहा है; सागर ही तुम्हारे भीतर आता है। और बाहर जाता है। प्रत्येक श्वास के साथ महसूस करो। जब लहर मिट रही है, उन दोनों के बीच तुम कौन हो। बस एक शुन्य एक खाली पन।

उस शून्यता के भाव के साथ तुम रूपांतरित हो जाओगे। उस खालीपन के भाव के साथ तुम्हारे सब दुःख विलीन हो जायेगे। क्योंकि दुःख को होने के लिए किसी केंद्र की जरूरत होती है। वह भी झूठे केंद्र की। शुन्य ही तुम्हारा असली केंद्र है। उस शून्य में दुःख नहीं है। उस शून्य में तुम गहन विश्राम में होते हो। जब तुम ही नहीं हो तो तनावग्रस्त कौन होगा। तुम तब आनंद से भर जाते हो। ऐसा नहीं है कि तुम आनंदपूर्ण होते हो; सिर्फ आनंद होता है। तुम्हारे बिना क्या तुम दुःख निर्मित कर सकते हो।

यही कारण है कि बुद्ध कभी नहीं कहते है कि उस अवस्था में, परम अवस्था में आनंद होगा। वे ऐसा नहीं कहते; वे यही कहते है कि दुःख नहीं होगा। बस। आनंद की बात करने से तुम भटक सकते हो, इसलिए बुद्ध आनंद की बात नहीं करते। वे कहते है कि आनंद की बात ही मत करो। सिर्फ जानो कि दुःख से कैसे मुक्त हुआ जाए; उसका मतलब है कि अपने बिना खुद के बिना कैसे हुआ जाए।

हमारी समस्या क्या है? समस्या यह है कि लहर अपने को सागर से पृथक मानती है। तब समस्याएं उठ खड़ी होती है। अगर लहर को सागर से पृथक मानती है तो उसे तुरंत मृत्यु का भय पकड़ता है। लहर तो मिटेगी। लहर अपने चारों और अन्य लहरों को मिटते हुए देख सकती है। लहर जानती है कि उसके उठने में ही कहीं मृत्यु छिपी है। क्योंकि दूसरी लहरें भी तो क्षण भर पहले उठ रही थी और अब वे गिर रही है। बिखर रही है। मिट रही है। तुम्हें भी मिटना होगा।

अगर लहर अपने को सागर से पृथक मानती है तो देर-अबेर मृत्यु का भय उसे अवश्य घेरेगा। लेकिन अगर लहर जान ले कि मैं नहीं हूं, सागर है। तो मृत्यु का कोई भय नहीं है। लहर ही मरती है; सागर नहीं मरता। मैं मर सकता हूं; लेकिन जीवन नहीं मरता। तुम मर सकते हो, तुम मरोगे। लेकिन जीवन नहीं मरेगा। अस्तित्व नहीं मरेगा। अस्तित्व तो लहराता ही जाता है। वह तुममें लहराया है; वह दूसरों में लहराएगा। और जब तुम्हारी लहर बिखर रही होगी; तो संभव है कि तुम्हारे बिखराव में से ही दूसरी लहरें उठे। सागर जारी रहता है।

जब तुम अपने को लहर के रूप में पृथक देख लेते हो तो सागर के साथ, अरूप के साथ एक जान लेते हो। एकात्म अनुभव करते हो। प्रत्येक संताप में, प्रत्येक चिंता में मृत्यु का भय मूलभूत है। तुम भयभीत हो, कांप रहे हो। चाहे तुम्हें इसका बोध न हो, लेकिन अगर तुम अपने अंतस में प्रवेश करोगे। तो पाओगे। कि प्रत्येक क्षण तुम कांप रहे हो, क्योंकि तुम मरने वाले हो। तुम अनेक सुरक्षा के उपाय कर सकते हो, तुम अपने चारों और क़िलाबंदी कर सकते हो; लेकिन कुछ भी काम न देगा। कुछ भी काम नहीं देगा। धूल-धूल में जा मिलती है। तुम धूल में मिलने ही वाले हो।

क्या तुमने कभी इस बात पर गौर किया है, इस तथ्य पर ध्यान किया है। कि अभी तुम रास्ते पर चल रहे हो तो जो धूल तुम्हारे जूते पर जमा हो रही है, हो सकता है वह धूल किसी नेपोलियन, किसी सिकंदर के शरीर की धूल हो। सिकंदर इस समय कही न कही धूल बना पडा है। और हो सकता है। कि तुम्हारे जूते से चिपकी धूल सिकंदर के शरीर की ही धूल हो। यही तुम्हारी भी हाल होने वाला है। इस क्षण तुम हो और अगले क्षण तुम नहीं होगे। यही तुम्हारा भी हाल होने वाला है। देर-अबेर धूल-धूल में मिल जाएगी। लहर विदा हो जायेगी।

भय पकड़ता है। जरा कल्पना करो कि तुम किसी के जूते से चिपकी हुई धूल हो या कोई तुम्हारे शरीर से, तुम्हारी प्रेमिका के शरीर से चाक पर बर्तन गढ़ रहा हो। या कल्पना करो कि तुम किसी कीड़े के शरीर में या वृक्ष के शरीर में प्रवेश कर रहे हो। लेकिन यही हो रहा है। प्रत्येक चीज रूप है और रूप को मिटना है। केवल अरूप शाश्वत है। अगर तुम रूप से बंधे हो, अगर रूप ही तुम्हारा तादात्म्य है। अगर तुम अपने को लहर मानते हो, तो तुम अपने ही हाथों उपद्रव में पड़ने वाले हो।

तुम सागर हो, लहर नहीं। यह ध्यान सहयोगी हो सकता है। यह तुम्हारा रूपांतरण बन सकता है। लेकिन इसे अपने पूरे जीवन पर फैलने दो। श्वास लेते हुए सोचो, भोजन करते हुए सोचो, चलते हुए सोचो। दो चीजें सोचो कि रूप सदा लहर है। और अरूप सागर है। कि रूप मृण्मय है। और अरूप अमृत है।

और ऐसा नहीं है कि तुम किसी दिन मरोगे; तुम प्रतिदिन मर रहे हो। बचपन मरता है। और यौवन जन्म लेता है। फिर यौवन मरता है और बुढ़ापा जन्म लेता है। और फिर बुढ़ापा मरता है और रूप विदा हो जाता है। प्रत्येक क्षण तुम मर रहे हो; प्रत्येक क्षण तुम जन्म रहे हो। तुम्हारे जनम का पहला दिन तुम्हारे जीवन का पहला दिन नहीं है। वह तो आने वाले अनेक-अनेक जन्मों में से एक है। वैसे ही तुम्हारे इस जीवन की मृत्यु पहली मृत्यु नहीं है। वह तो सिर्फ इस जीवन की मृत्यु है। वैसे ही तुम पहले भी मरते रहे हो। प्रतिक्षण कुछ मर रहा हे। और कुछ जन्म ले रहा है। तुम्हारा एक अंश मरता है, दूसरा अंश जन्मता है।

शरीर शास्त्री कहते है कि सात वर्षों में तुम्हारे शरीर का कुछ भी पुराना नहीं बचता है। एक-एक चीज, एक-एक कोष्ठ बदल जाता है। अगर तुम सत्तर वर्ष जीने वाले हो तो इस बीच तुम्हारा शरीर दस बार बदलेगा। पूरे का पूरा बदलेगा। हर सात वर्षों में तुम्हें नया शरीर मिलता है। लेकिन यह परिवर्तन अचानक नहीं होता। प्रत्येक क्षण कुछ न कुछ बदल रहा होता है।

तुम एक लहर हो और वह भी बहुत ठोस नहीं। प्रत्येक क्षण बदल रही हो। और लहर थिर नहीं हो सकती। गतिहीन नहीं हो सकती। लहर को सतत बदलते रहना है, सतत गतिमान रहना है। थिर रहना है। थिर लहर जैसी कोई चीज नहीं होती। कैसे हो सकती है? थिर लहर का कोई अर्थ नहीं है। वह गति है, प्रक्रिया है। तुम गति हो, प्रक्रिया हो। अगर तुम इस गति से तादात्म्य कर बैठे हो और अपने को जन्म और मृत्यु के बीच सीमित मानने लगते हो। तुम पीड़ा में, दुःख में पड़ोगे। तब तुम आभास को सत्य मान रहे हो। इसको ही शंकर माया कहते थे।

सागर ब्रह्म है; सागर सत्य है। अपने को लहर मानो, या उठती गिरती लहरों का एक सातत्य मानो। और उसके साक्षी होओ। तुम कुछ कर नहीं सकते हो। ये लहरें विलीन होंगी। जो प्रकट हुआ है, वह विलीन होगा, उसके संबंध में कुछ नहीं किया जा सकता है। सब प्रयत्न बिलकुल व्यर्थ है। सिर्फ एक चीज की जा सकती है। वह है इस लहर रूप का साक्षी होना। और एक बार तुम साक्षी हो गए तो तुम्हें अचानक उसका बोध हो जाएगा जा लहर के पार है। जो लहर के पीछे है, जो लहर में भी है। और लहर के बहार भी है। जिससे लहर बनती है। और जो फिर भी लहर के पार है; जो सागर है।

''जैसे-जल से लहरें उठती है। अग्नि से लपटें, वैसे ही सर्वव्यापक हम से लहराता है।''

सर्वव्यापक हमसे लहराता है। तुम नहीं हो; सर्वव्यापक है। वह तुम्हारे द्वारा लहरा रहा है। इसे महसूस करो, इसका मनन करो, इस पर ध्यान करो। और बहुत-बहुत ढंगों से इसे अपने पर घटित होने दो।

मैंने तुम्हें श्वास के संबंध में कहा। तुममें कामवासना उठती हे। उसे महसूस करो, ऐसे नहीं जैसे वह तुम्हारी कामवासना है, बल्कि ऐसे कि सागर तुममें लहरा रहा है, जीवन तुममें धड़क रहा है। जीवन तुममें लहर ले रहा है। तुम संभोग में मिलते हो ; ऐसा मत सोचो कि दो लहरें मिल रही है। ऐसा मत सोचो कि दो व्यक्ति मिल रहे है। बल्कि ऐसा सोचो कि दो व्यक्ति एक दूसरे में विलीन हो रहे है। दो व्यक्ति अब नहीं बचे; लहरें विलीन हो गई है, केवल सागर बचा है। तब संभोग ध्यान बन जाता है।

जो भी तुम्हें घटित हो रहा है। ऐसा भाव करो कि वह ब्रह्मांड को घटित हो रहा है। कि मैं उसका अंश हूं, कि मैं सतह पर एक लहर मात्र हूं, सब कुछ अस्तित्व पर छोड़ दो।

झेन सदगुरू डोजेन कहा करता था—जब उसे भूख लगती है, तो वह कहता था—कि ऐसा लगता है कि अस्तित्व को मेरे द्वारा भूख लगी है। जब उसे प्यास लगती है तो वह कहता था कि मेरे भीतर अस्तित्व प्यासा है।

यह ध्यान तुम्हें उसी स्थिति में पहुंचा देगा। तब तुम्हारा अहंकार बिखर जाता है। मिट जाता है और सब कुछ ब्रह्मांड का हिस्सा हो जाता है। तब जो भी होता है। अस्तित्व को होता है। तुम अब यहां नहीं हो। और तब कोई पाप नहीं है; तब कोई जिम्मेदारी नहीं है।

अब तो केवल तुम हो; इसलिए किसके प्रति जिम्मेदार होगे?

अब अगर तुम किसी को मरते देखोगें तो तुम्हें लगेगा कि उसके साथ, उसके भीतर मैं ही मर रहा हूं। तब तुम्हें लगेगा कि पूरा जगत मर रहा है और मैं उस जगत का अंश हूं। और अगर किसी फूल को खिलते देखोगें तो तुम उसके साथ-साथ खोलोगे। अब सारा ब्रह्मांड तुममय है। और ऐसी घनिष्ठता में, ऐसा लयबद्धता में होना समाधि में होना है। ध्यान मार्ग है। और यह एकता का भाव, सब के साथ जुड़े होने का भाव मंजिल हे।

इसे प्रयोग करो। सागर को स्मरण रखो। और लहर को भूल जाओ। और ध्यान रहे, जब भी तुम लहर को स्मरण करोगे। और लहर की भांति व्यवहार करोगे। तो तुम भूल करोगे और उसके कारण दुःख में पड़ोगे। कहीं कोई ईश्वर नहीं है। जो तुम्हें दंड दे रहा है। जब भी तुम किसी भ्रांति के शिकार होते हो, तुम अपने को दंड देते हो। जगत में एक नियम है। धर्म है, ताओ है। अगर तुम इसके साथ लयबद्ध चलते हो तो तुम आनंद में हो। यदि तुम उसके विपरीत चलोगे, तुम अपने को दुःख में पाओगे। वहां आकाश में कोई नहीं बैठा है तुम्हें दंडित करने को। वहां तुम्हारे पापों को कोई बही-खाता नहीं है। न उसकी कोई जरूरत है।

यह ठीक गुरूत्वाकर्षण जैसा है। अगर तुम सही ढंग से चलते हो तो गुरूत्वाकर्षण सहयोगी होता है, गुरूत्वाकर्षण के बिना तुम चल नहीं सकते। लेकिन अगर तुम गलत ढंग से चलोगे तो गिरोगे; अपनी हड्डी भी तोड़ सकते हो। लेकिन कोई तुम्हें दंड नहीं दे रहा है। सिर्फ नियम है। गुरुत्वाकर्षण का। निरपेक्ष नियम है। अगर तुम गलत चलोगे और गिरोगे तो तुम्हारी हड्डी टूट जायेगी। और ठीक से चलोगे तो उसका मतलब है कि तुम गुरूत्वाकर्षण का सही उपयोग कर रहे हो। ऊर्जा का सही और गलत दोनों तरह से उपयोग हो सकता है।

जब तुम अपने को लहर मानते हो तो तुम जागतिक नियम के विरोध में हो, तुम सत्य के विरोध में हो। तब तुम अपने लिए दुःख निर्मित करोगे। कर्म के सिद्धांत का यही मतलब है। कोई कानून बनाने वाला नहीं है। परमात्मा कोई जज नहीं है। जज होना कुरूप बात है। और अगर ईश्वर कोई जज होता तो बिलकुल ऊब जाता। या पागल हो जाता। जगत में अपने नियम है। और बुनियादी नियम यह है कि सच्चा होना आनंद में होना है। और झूठा होना दुःख में होना है।

ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र, भाग-तीन

प्रवचन-39

विज्ञान भैरव तंत्र विधि—62 (ओशो)

''जहां कहीं तुम्हारा मन भटकता है, भीतर या बाहर, उसी स्थान पर, यह।''

''जहां कहीं तुम्हारा मन भटकता है,

मन एक द्वार है—यही मन जहां कही भी भटकता है, जो कुछ भी सोचता है। मनन करता है। सपने देखता है। यही मन और यही क्षण द्वार है।

यही एक अति क्रांतिकारी विधि है, क्योंकि हम कभी नहीं सोचते कि साधारण मन द्वार है। हम सोचते है कि कोई महान मन, कोई बुद्ध या जीसस का मन प्रवेश कर सकता है। हम सोचते है कि बुद्ध या जीसस के पास कोई असाधारण मन है। और यह सूत्र कहता है कि तुम्हारा साधारण मन ही द्वार है। यही मन जो सपने देखता है। कल्पनाएं करता है। ऊलजलूल सोच-विचार करता है। यही मन द्वार है जो कुरूप कामनाओं और वासनाओं से क्रोध और लोभ से खचाखच भरा है। जिसमें यह सब है जो निंदित है। जो तुम्हारे बस के बाहर है। जो तुम्हें यहां सक वहां भटकाता रहता है। जो सतत एक पागलखाना है। यही मन द्वार है।

''जहां कहीं तुम्हारा मन भटकता है.....।''
इस जहां कहीं को स्मरण रखो। भटकने का विषय महत्वपूर्ण नहीं है।

जहां कहीं तुम्हारा मन भटकता है। भीतर या बाहर, उसी स्थान पर, यह।''

बहुत सी बातें समझने जैसी है। एक कि साधारण मन उतना साधारण नहीं है जितना हम समझते है। साधारण मन जागतिक मन से असंबद्ध नहीं है। वह उसका ही अंश है। उसकी जड़ें अस्तित्व के केंद्र तक चली गई है। अन्यथा तुम अस्तित्व में नहीं हो सकते हो। एक पापी भी परमात्मा में आधारित है; अन्यथा यह अस्तित्व में नहीं हो सकता था। वह जो शैतान है ह भी परमात्मा के सहारे के बिना नहीं हो सकता है। अस्तित्व ही इसलिए संभव है। क्योंकि वह परमात्मा में प्रतिष्ठित है।

तुम्हारा मन स्वप्न देखता है। कल्पना करता है, भटकता है; वह तनावग्रस्त है, दुःखी है। संताप में है। वह जैसे भी गति करता है, जहां भी जाता है, वह समग्र से जुड़ा रहता है। अन्यथा संभव नहीं है। तुम अस्तित्व से भाग नहीं सकते। वह असंभव है। इसी क्षण तुम्हारे जड़ें अस्तित्व में गड़ी है। तब क्या किया जाएं?

अगर इसी क्षण हमारी जड़ें अस्तित्व में गड़ी है तो अहंकारी मन को लगेगा कि फिर तो कुछ कना नहीं है। हम तो परमात्मा में ही है। फिर इतनी आपा धापी की क्या जरूरत है। तुम्हारी जड़ें तो परमात्मा में है। लेकिन तुम इस तथ्य के प्रति मूर्छित हो। जब मन भटकता है तो दो चीजें होती है: मन और भटकाव;मन के विषय और मन; आकाश में तैरते बादल और आकाश। वहां दो चीजें है: बादल और आकाश। कभी ऐसा भी हो सकता है। कि बादल इतने हो जाते है कि आकाश छिप जाता है। तुम उसे देख नहीं सकते हो।

लेकिन जब तुम नहीं देख पाते हो तब भी आकाश विलीन नहीं होता है। वह विलीन नहीं हो सकता है। आकाश के विलीन होने का कोई उपाय नहीं है। वह है; आच्छादित या प्रकट, दृश्य आ अदृश्य है। अगर तुम बादलों पर ही ध्यान देते हो तो आकाश भूल जाता है। और अगर तुम आकाश पर ध्यान देते हो तो बादल गौण हो जाते है। वे आते और जाते है, तुम्हें बादलों की बहुत चिंता लेने की जरूरत नहीं लेनी चाहिए। वे आते जाते रहते है। तुम्हें पता होना चाहिए की इन बादलों ने रति भर भी आकाश को नष्ट नहीं किया है। उन्होंने आकाश को गंदा भी नहीं किया है। उन्होंने उसका स्पर्श भी नहीं किया है। आकाश तो सदा कुंआरा है।

जब तुम्हारा मन भटकता है तो दो चीजें होती है। एक तो बादल है, विचार है, विषय है, बिंब है। और दूसरी चेतना है, खुद मन है। जब तुम बादलों पर विचारों पर, बिंबों पर बहुत ध्यान देते हो तो तुम आकाश को भूल जाते हो। तब तुम मेजबान को भूल गए और मेहमान में ही बुरी तरह से उलझ गये। वे विचार, वे बिंब, जो भटक रहे है। केवल मेहमान है। अगर तुम मेहमानों पर सब ध्यान लगा देते हो तो तुम अपनी आत्मा ही भूल बैठे।

अपने ध्यान को मेहमानों से हटाकर मेजबान पर लगाओ; बादलों से हटाकर आकाश पर केंद्रित करो। और इसे व्यावहारिक ढंग से करो। कामवासना उठती है। वह बादल है। या बड़ा घर पाने को लोभ पैदा होता है। यह भी बादल है। तुम इससे इतने

ग्रस्त हो जा सकते हो कि तुम भूल ही जाओ कि यह किस में उठ रहा है। यह किसी को घटित हो रहा है। कौन इसके पीछे है। किस आकाश में यह बादल उठ रहे है। उस आकाश को स्मरण करो; और अचानक बादल विदा हो जाएगा। सिर्फ बदलने की जरूरत है। परिप्रेक्ष्य बदलने की जरूरत है। दृष्टि को विषय से विषयी पर, बाहर से भीतर पर, बादल से आकाश पर, अतिथि से आतिथेय पर ले जाने की जरूरत है। सिर्फ दृष्टि को बदलना है। फोकस को बदलना है।

एक झेन सदगुरू लिंची प्रवचन कर रहा था। भीड़ में से किसी ने कहा: मेरे एक प्रश्न का उत्तर दें, मैं कौन हूं? लिंची ने बोलना बंद कर दिया। सब लोग चौकन्ने हो गए। लिंची क्या उत्तर देने जा रहा है। सब यही सोच रहे थे। लेकिन उसने कोई उत्तर नहीं दिया। वह कुर्सी से नीचे उतरा, आगे बढ़ा और उस आदमी के पास पहुंचा। पूरी भीड़ चकित और सजग हो उठी। लोगों की श्वासें तक रूक गई। लिंची क्या करने जा रहा है। उसे कुर्सी पर बैठे-बैठे ही जवाब देना था; कुर्सी से उठने की क्या जरूरत थी? और प्रश्नकर्ता तो बहुत भयभीत हो गया। लिंची अपनी बेधक दृष्टि उस व्यक्ति पर जमाए पास आया। उसने उस आदमी का गला पकड़ लिया, उसे झकझोरा और कहा; आंखे बंद करो और उसका स्मरण करो जो यह प्रश्न पूछ रहा है।

उस आदमी ने आंखें बंद की—हांलाकि डरते-डरते। वह अपने भीतर खोजने गया कि किसने यह प्रश्न पूछा था। और वह वापस नहीं आया। भीड़ प्रतीक्षा करती रही। प्रतीक्षा करती रही,उस आदमी का चेहरा मौन और शांत हो गया। तब लिंची ने उसे फिर झकझोरा: ''अब बहार आओ, और सब को बताओ कि तुम कौन हो। वह आदमी हंसने लगा और कहा: जवाब देने का आपका खूब अद्भुत ढंग है। लेकिन यदि कोई व्यक्ति अभी मुझसे यही पूछे तो मैं भी वह भी वहीं करूंगा। ''मैं उत्तर नहीं दे सकता।''

यह दृष्टि की, परिप्रेक्ष्य की बदलाहट थी। तुम पूछते हो कि मैं कौन हूं। और तुम्हारा मन प्रश्न पर केंद्रित है, जब कि उत्तर प्रश्न के ठीक पीछे प्रश्न कर्ता में छिपा है। दृष्टि को बदलों; अपने पर लौट आओ।

यह सूत्र कहता है: ''जहां-जहां तुम्हारा मन भटकता है, भीतर या बाहर, उसी स्थान पर यह।''

तुम सोचते हो कि बादल मेरी संपदा है। तुम सोचते हो कि जितनी ज्यादा बादल होंगे, मैं उतना ही बेहतर, उतना ही ज्यादा समृद्ध हो जाऊँगा। और तुम्हारा सारा आकाश सारा आंतरिक आकाश उनसे आच्छादित है, ढंका है। एक अर्थ में, बादलों में आकाश खो गया है। और बादल ही तुम्हारा जीवन है। और बादलों का जीवन ही संसार है।

यह बात एक क्षण में घट सकती है। यह दृष्टि सदा अचानक ही घटती है। में यह नहीं कह रहा हूं कि तुम कुछ भी मत करो और अचानक घटेगी। तुम्हें बहुत कुछ करना होगा। लेकिन यह क्रमिक ढंग से नहीं घटता। तुम्हें बहुत कुछ करना होगा। तब करते-करते एक दिन वह क्षण आता है जब तुम भाप बनने के सही तापमान पर पहुंच जाते हो। अचानक पानी-पानी नहीं रहता है; वह भाप बन गया। अचानक तुम विषय से बाहर हो गए। तुम्हारी आंखें अब बादलों पर नहीं अटकती है। अब अचानक तुम आंतरिक आकाश की तरफ भीतर मुड़ जाते हो।

ऐस कभी क्रमिक रूप से नहीं होता। तुम्हारी आँख का एक अंश भी तर की और मुड़ जाता है और उसका दूसरा अंश बाहर बादलों पर लगा रहता है। नहीं, यह अंशों में नहीं घटित होता। कि तुम अस दस प्रतिशत भीतर हो और नब्बे प्रतिशत बाहर, कि बीस प्रतिशत भीतर हो और अस्सी प्रतिशत बाहर। नहीं जब यह घटित होता है तो शत प्रतिशत होता है। क्योंकि तुम अपनी दृष्टि को खंड-खंड नहीं कर सकते हो। या तो तुम विषयों को देखते हो या अपने को; या तो संसार को या ब्रह्म को।

फिर तुम संसार में वापस आ सकते हो। तुम फिर अपनी दृष्टि बदल सकते हो। अब तुम मालिक हो। सच तो यह है कि तुम तभी मालिक होते हो जब स्वेच्छा से अपनी दृष्टि बदल सकते हो।

मुझे एक तिब्बती संत मारपा का स्मरण आता है। जब वह ज्ञान को उपलब्ध हुआ—(जब वह बुद्ध हुआ, जब वह अंतस की और मुड़ गया, जब उसने अंतराकाश का, अनंत का साक्षात्कार किया—तो किसी ने उससे पूछा: मारपा अब कैसे हो? तो मारपा ने अत्तर दिया वह अपूर्व है, अप्रत्याशित है। अब तक किसी बुद्ध ने वैसा उत्तर नहीं दिया था। मारपा ने कहा: पहले जैसा ही दुःखी।

वह आदमी तो भौचक्का रह गया; उसने पूछा: पहले जैसा ही दुखी? लेकिन मारपा हंसा, उसने कहा: हां, लेकिन एक फर्क के साथ। और फर्क यह है कि अब मेरा दुःख स्वैच्छिक है। अब मैं कभी-कभी बस संसार का स्वाद लेने के लिए अपने से बहार लौट सकता हूं। लेकिन मैं मालिक हूं। मैं किसी भी क्षण भीतर लौट सकता हूं। और दोनों ध्रुवों के बीच गति कर सकता हूं। तभी कोई जीवित रह सकता है। कभी में दुखों में लौट सकता हूं, लेकिन अब दुख मुझे नहीं घटित होते है, मैं ही उन्हें घटित होता हूं। और मैं उनसे अछूता रह सकता हूं।

निश्चित ही, जब तुम स्वेच्छा से गति करते हो एक बार तुमने जान लिया कि दृष्टि को अंतर्मुखी कैसे किया जाए,तुम संसार में वापस आ सकते हो। सभी बुद्ध पुरूष संसार में वापस आए है। वे दृष्टि को फिर संसार में ले जाते है। लेकिन अब आंतरिक मनुष्य की गुणवता भिन्न है। वह जानता है कि यह उसकी स्वतंत्र दृष्टि है; वह बादलों को भी गति करने की इजाजत दे सकता है। अब बादल मालिक न रहे। वे तुम पर हावी नहीं हो सकते है। वे अब तुम्हारी मर्जी से घूमते है।

और यह सुंदर है। कभी-कभी बादलों से भरा आकाश सुंदर होता है। बादलों की हलचल सुंदर होती है। अगर आकाश-आकाश बना रहे तो बादलों को तैरने दिया जा सकता है। समस्या तो तब खड़ी होती है। जब आकाश अपने को भूल जाता है। और वहां बादल ही बादल रह जाते है। तब सब कुछ कुरूप हो जाता है। क्योंकि स्वतंत्रता खो गई।

यह सूत्र सुंदर है: ''जहां कहीं तुम्हारा मन भटकता है, भीतर या बाहर, उसी स्थान पर, यह।''

झेन परंपरा में इस सूत्र का गहरा उपयोग हुआ है। झेन कहते है कि साधारण मन ही बुद्ध-मन है। भोजन करते हुए तुम बुद्ध हो; सोते हुए तुम बुद्ध हो। कुएं से पानी ले जाते हुए तुम बुद्ध हो। तुम हो, कुएं से पानी ले जाते हुए। भोजन करते हुए। विस्तर पर लेटे हुए तुम बुद्ध हो। यह पहेली जैसा लगता है। लेकिन यह सच है। अगर पानी ढोते हुए तुम सिर्फ पानी ढोते हो। तुम उसे समस्या नहीं बनाते और सिर्फ पानी ढोते हो। अगर तुम्हारा मन बादलों से मुक्त है। और आकाश खाली है। अगर तुम केवल पानी ढोते हो, तो तुम बुद्ध हो। तब भोजन करते हुए तुम सिर्फ भोजन करते हो और कुछ नहीं करते।

लेकिन हम जब भोजन करते है तो उसके साथ हजारों चीजें करते-रहते है। हो सकता है तुम्हारा मन भोजन में बिलकुल न हो; तुम्हारा शरीर यंत्र की भाती भोजन कर रहा हो। तुम्हारा मन कहीं और हो सकता है।

किसी विश्वविद्यालय का एक छात्र कुछ दिन पहले आया था। उसकी परीक्षा करीब थी। इसलिए वह कुछ पूछने आया था। उसने कहा: में बहुत उलझन में हूं। समस्या यह है कि मैं एक लड़की के प्रेम में पड़ गया हूं। तो परीक्षा की सोचता रहता हूं और जब पढ़ता रहता हूं तो लड़की के विषय में सोचता रहता हूं। पढ़ते समय मैं वहां नहीं होता। मैं कल्पना में अपनी प्रेमिका के साथ होता हूं। और जब प्रेमिका के साथ होता हूं तो कभी उसके साथ नहीं होता हूं। मैं अपनी समस्याओं के बारे में, नजदीक आती परीक्षा के बारे में चिंता करता रहता हूं। नतीजा यह है किसब कुछ गुड-मुड़ हो गया है।

यह लड़का ही नहीं ऐसे ही हर कोई गुड़-मुड़ है। जब तुम दफ्तर जाते हो तो तुम्हारा मन घर में होता है। तुम जब घर में होते हो तो तुम्हारा मन दफ्तर में होता है। और तुम ऐसा जादुई करिश्मा कर नहीं सकते;घर में होकर तुम घर में ही हो सकते हो, दफ्तर में नहीं हो सकते। और अगर तुम दफ्तर में हो तो तुम्हारा दिमाग ठीक नहीं है, तुम पागल हो। तब हर चीज दूसरी चीज में उलझ जाती है। गुत्थमगुत्था हो जाती है। तब कुछ भी स्पष्ट नहीं है। और यही मन समस्या है।

कुएं से पानी खींचते हुए, कुएं से पानी ढोते हुए तुम अगर मात्र यही काम कर रहे हो तो तुम बुद्ध हो। अगर तुम झेन सदगुरूओं के पास जाओ और उसने पूछो कि आप क्या करते है? आपकी साधना क्या है? ध्यान क्या है? तो वे कहेंगे: जब नींद आती है तो हम सो जाते है। जब भूख लगती है तो हम भोजन करते है। बस यही हमारी साधना है और कोई साधना नहीं है।

लेकिन यह बहुत कठिन है। हालांकि आसान मालूम होती है। अगर भोजन करते हुए तुम सिर्फ भोजन करो,अगर बैठे हुए तुम सिर्फ बैठो और कुछ न करो। कोई विचार न हो, अगर तुम वर्तमान क्षण के साथ रह सको,उससे हटो नहीं,अगर तुम वर्तमान क्षण में डूब सको,न कोई अतीत हो, न कोई भविष्य हो, अगर वर्तमान क्षण ही एकमात्र अस्तित्व हो, तो तुम बुद्ध हो। तब यही मन बुद्ध मन बन जाता है।

तो जब तुम्हारा मन भटकता है तो उसे रोकने की चेष्टा मत करो, बल्कि आकाश को स्मरण करो। जब मन भटकता है तो उसे रोको मत। उसे किसी बिंदु पर लाने की, एकाग्र करने की चेष्टा मत करो। नहीं, उसे भटकने दो। लेकिन भटकाव पर बहुत अवधान मत दो—न पक्ष में,ने विपक्ष में, क्योंकि तुम चाहे उसके पक्ष में रहो या विपक्ष में, तुम उससे बंधे रहते हो। आकाश को स्मरण करो। भटकन को चलने दो। और इतना ही कहो; ठीक है, पर चलती हुई राह है; अनेक लोग इधर-उधर चले जा रहे है। मन एक चलती हुई राह है। मैं आकाश हूं बादल नहीं ।

इसी स्मरण को याद रखो। इस भाव में उतरो ; इसमें ही स्थिर रहो। देर अबेर तुम देखोगें कि बादलों की गति बंद पड़ गई है। बादलों के बीच में अंतराल आने लगा है। वे अब उतने घने नहीं रहे है। उनकी गति मंद पड़ गई है। उनके पीछे का आकाश दिखाई पड़ने लगा है। अपने को आकाश की भांति अनुभव करते रहो; बादलों की भांति नहीं। देर-अबेर किसी दिन, किसी सम्यक क्षण में,जब तुम्हारी दृष्टि सचमुच भीतर लौट गई है। बादल विलीन हो जाएंगे। और तब तुम शुद्ध आकाश हो, सदा से शुद्ध,सदा से अस्पर्शित आकाश हो।

और एक बार तुमने इस कुंआरी पन को जान लिया तो फिर बादलों में, बादलों के संसार में वापस आ सकते हो। तब संसार का अपना ही सौदर्य है, तब तुम इसमे रह सकते हो। लेकिन अब तुम मालिक हो।

संसार बुरा नहीं है। मालिक की तरह संसार समस्या नहीं है। जब तुम ही मालिक हो तो तुम उसमें रह सकते हो। तब संसार का अपना ही सौदर्य है; वह सुंदर है। प्यारा है। लेकिन तुम उसे सौंदर्य को, उस माधुर्य को अपने भीतर मलिक होकर ही जान सकते हो।

ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र, भाग-तीन

प्रवचन-39

विज्ञान भैरव तंत्र विधि—63 (ओशो)

''जब किसी इंद्रिय-विषय के द्वारा स्पष्ट बोध हो, उसी बोध में स्थित होओ।''

जब किसी इंद्रिय-विषय के द्वारा स्पष्ट बोध हो,……

तुम अपनी आँख के द्वारा देखते हो। ध्यान रहे, तुम अपनी आँख के द्वारा देखते हो। आंखे नहीं देख सकती। उनके द्वारा तुम देखते हो। द्रष्टा पीछे छिपा है। भीतर छिपा है; आंखें बस द्वार है। झरोखे है। लेकिन हम सदा सोचते है कि हम आँख से देखते है। हम सोचते है कि हम कान से सुनते है। कभी किसी ने कान से नहीं सुना है। तुम कान के द्वारा सुनते हो। कान से नहीं। सुननेवाला पीछे है। कान तो रिसीवर है।
मैं तुम्हें छूता हूं, मैं बहुत प्रेमपूर्वक तुम्हारा हाथ अपने हाथ में लेता हूं। यह हाथ नहीं है। जो तुम्हें छूता है। यह मैं हूं, जो हाथ के द्वारा तुम्हें छू रहा है। हाथ यंत्र है। और स्पर्श से बचना भी दो भांति का है। एक, जब मैं सच ही तुम्हें स्पर्श करता हूं। और दूसरा, जब मैं स्पर्श से बचना चाहता हूं। मैं तुम्हें छूकर भी स्पर्श से बच सकता हूं। मैं अपने हाथ में न रहूँ। मैं हाथ से अपने को अलग कर सकता हूं।

इसे प्रयोग करके देखो, तुम्हें एक भिन्न अनुभव होगा। एक दूरी का अनुभव होगा1 किसी पर अपना हाथ रखो और अपने को अलग रखो; यहां सिर्फ मुर्दा हाथ होगा। तुम नहीं। और अगर दूसरा व्यक्ति संवेदनशील है तो उसे मुर्दा हाथ का एहसास हो जायेगा। वह अपने का अपमानित महसूस करेगा, आपके इस व्यवहार से। क्योंकि तुम उसे धोखा दे रहे हो। तुम छूने का दिखाव कर रहे हो।

स्त्रियां इस मामले में बहुत संवेदनशील है; तुम उन्हें धोखा नहीं दे सकते हो। स्पर्श के प्रति, शारीरिक स्पर्श के प्रति वे ज्यादा सजग है; वे जान जाती है। हो सकता है पति मीठी-मीठी बातें कर रहा हो। वह फूल ले आया हो। और कह रहा हो कि मैं तुम्हें प्रेम करता हूं। लेकिन उसका स्पर्श कह देगा कि वह वहां नहीं है। और स्त्रियों को सहज बोध हो जाता है। कि कब तुम उनके साथ हो और कब नहीं। अगर तुम अपने मालिक नहीं हो तो तुम उन्हें धोखा नहीं दे सकते हो। अगर तुम्हें अपने ऊपर मलकियत नहीं है तो तुम उन्हें धोखा नहीं दे सकते। और जो अपना मालिक है वह पति होना नहीं चाहेगा। वह कठिनाई है। तुम जो भी कहोगे तुम्हारा स्पर्श उसे झुठला देगा।

यह सूत्र कहता है कि इंद्रियाँ द्वार भर है—एक माध्यम, एक यंत्र, एक रिसीविंग स्टेशन और तुम उनके पीछे हो।

''जब किसी इंद्रिय-विशेष के द्वारा स्पष्ट बोध हो, उसी बोध में स्थित होओ।''

संगीत सुनते हुए अपने को कान में मत खो दो। मत भूला दो; उस चैतन्य को स्मरण करो। जो पीछे छिपा है। होश रखो। किसी को देखते हुए इस विधि को प्रयोग करो। तुम यह प्रयोग मुझे देखते हुए अभी और यही कर सकते हो। क्या हो रहा है?

तुम मुझे आँख से देख सकते हो। और जब मैं कहता हूं आँख से तो उसका मतलब है कि तुम्हें इसका बोध नहीं है कि तुम आँख के पीछे छिपे हो। तुम मुझे आँख के द्वारा देख सकते हो। आँख एक यंत्र है। तुम आँख के पीछे खड़े हो। आँख के द्वारा देख रहे हो। जैसे किसी खिड़की या ऐनक के द्वारा देखता है।

तुमने बैंक में किसी क्लर्क को अपने ऐनक के ऊपर से देखते हुए देखा होगा। ऐनक उसकी नाक पर उतर आयी है। और वह देख रहा है। उसी ढंग से मुझे देखो, मेरी तरफ देखो, ऐसे देखो जैसे आँख से ऊपर से देखते हो। मानो तुम्हारी आंखें सरककर नीचे नाक पर आ गई हों और तुम उनके पीछे से मुझे देख रहे हो। अचानक तुम्हें गुणवत्ता में फर्क मालूम पड़ेगा तुम्हारा परिप्रेक्ष्य बदलता है। आंखे महज द्वार बन जाती है। और यह ध्यान बन जाता है।

सुनते समय कानों के द्वारा मात्र सुनो और अपने आंतरिक केंद्र के प्रति जागे रहो। स्पर्श करते हुए हाथ के द्वारा मात्र छुओ और आंतरिक केंद्र को स्मरण रखो जो पीछे छिपा है। किसी भी इंद्रिय से तुम्हें आंतरिक केंद्र की अनुभूति हो सकती है। और प्रत्येक इंद्रिय आंतरिक केंद्र तक जाती है। उसे सूचना देती है।

यहीं कारण है कि जब तुम मुझे देख और सुन रहे हो—जब तुम आँख के द्वारा देख रहे हो और कान के द्वारा सुन रहे हो—तो तुम जानते हो कि तुम उसी व्यक्ति को देख रहे हो। जिसे सुन भी रहे हो। अगर मेरे शरीर में कोई गंध है। तो तुम्हारी नाक उसे भी ग्रहण करेगी। उस हालत में तीन-तीन इंद्रियाँ एक ही केंद्र को सूचना दे रही है। इसी से तुम संयोजक कर पाते हो। अन्यथा संयोजन कठिन होता।

अगर तुम्हारी आंखे ही देखती है और कान ही सुनते है तो यह जानना कठिन होता है कि तुम उसी व्यक्ति को सुन रहे हो जिसे देख रहे हो। या दो भिन्न व्यक्तियों को देख और सुन रहे हो; क्योंकि दोनों इंद्रियाँ भिन्न है। और वे आपस में नहीं मिलती है। तुम्हारी आंखों को तुम्हारे कान का पता नहीं है। और तुम्हारे कान को तुम्हारी आंखों का कुछ पता नहीं है। वे एक दूसरे को नहीं जानते है। वे आपस में कभी मिले नहीं है। उनका एक दूसरे से परिचय भी नहीं है। तो फिर सारा समन्वय, सारा संयोजन कैसे घटित होता है?

कान सुनते है, आंखें देखती है, हाथ छूते है, नाक सूँघती है। और अचानक तुम्हारे भीतर कहीं कोई जान जाता है कि यह वही आदमी है जिसे में सुन रहा हूं। देख रहा हूं। सभी इंद्रियाँ इस ज्ञाता को ही सूचना देती है। और इस ज्ञाता में, इस केंद्र में सब कुछ सम्मिलित होकर, संयोजित होकर एक हो जाता है। यह चमत्कार है।

मैं एक हूं; तुम्हारे बहार से मैं एक हूं। मेरी शरीर, मेरे शरीर की उपस्थिति, उसकी गंध मेरा बोलना,सब एक है। लेकिन तुम्हारी इंद्रियाँ मुझे विभाजित कर देंगी। तुम्हारे कान मेरे बोलने की खबर देंगे। तुम्हारी नाक मेरी गंध की खबर देगी। और तुम्हारी आंखें मेरी उपस्थिति की खबर देंगी। वे इंद्रियाँ मुझे टुकड़ों में बांट देंगी। लेकिन फिर तुम्हारे भीतर कहीं पर मैं एक हो जाऊँगा। जहां तुम्हारे भीतर में एक होता है, वह तुम्हारे होने का केंद्र है। वह तुम्हारा बोध है। चैतन्य है। तुम उसे बिलकुल भूल गए हो। यह विस्मरण ही अज्ञान है। और बोध का चैतन्य आत्मा ज्ञान को द्वार खोलता है। तुम और किसी उपाय से अपने को नहीं जान सकते हो।

''जब किसी इंद्रिय-विशेष के द्वारा स्पष्ट बोध हो। उसी होश में स्थित होओ।''

उसी बोध में रहो; उसी बोध में स्थित रहो। होश पूर्ण होओ।

आरंभ में यह कठिन है। हम बार-बार सो जाते है। और आँख के द्वारा देखना कठिन मालूम पड़ता है। आँख से देखना आसान है। आरंभ में थोड़ा तनाव अनुभव होगा और तुम आँख के द्वारा देखने की चेष्टा करोगे। और न केवल तुम तनाव अनुभव करोगे। वह व्यक्ति भी तनाव अनुभव करेगा जिसे तुम देखोगें।

अगर तुम किसी आँख के द्वारा देखोगें तो उसे लगेगा कि तुम अनुचित रूप से दखल दे रहे हो। कि तुम उसके साथ अभद्र व्यवहार कर रहे हो। तुम अगर आँख के द्वारा देखोगें तो दूसरे को अचानक अनुभव होगा कि तुम उसके साथ उचित व्यवहार नहीं कर रहे हो। क्योंकि तुम्हारी दृष्टि बेधक बन जाएगी। तुम्हारी दृष्टि गहराई में उतर जाएगी। अगर यह दृष्टि तुम्हारी गहराई से आती है। वह उसकी गहराई में प्रवेश कर जाएगी।

यही कारण है कि समाज ने एक बिल्ट-इन सुरक्षा की व्यवस्था कर रखी है। समाज कहता है कि जब तक तुम किसी के प्रेम में नहीं हो, उसे बहुत घूरकर मत देखो। अगर तुम प्रेम में हो तो देख सकते हो। तब तुम उसके अंतर्तम तक प्रवेश कर सकते हो। क्योंकि वह तुमसे भयभीत नहीं है। तब दूसरा तुम्हारे प्रति नग्न हो सकता है। समग्रता: नग्न हो सकता है। वह तुम्हारे प्रति खुला हो सकता है। लेकिन साधारणत: अगर तुम प्रेम में नहीं हो। तो किसी को घूरने की, बेधक दृष्टि देखने की मनाही है।

भारत में हम ऐसे आदमी को, जो दूसरे को घूरता है, लुच्चा कहते है। लुच्चा का अर्थ है, देखने वाला। लुच्चा शब्द लोचन से आता है। लुच्चा का अर्थ हुआ कि जो आँख ही बन गया है। इसलिए इस विधि का प्रयोग किसी अपरिचित पर मत करना। वह तुम्हें लुच्चा समझेगा। पहले इस विधि का प्रयोग ऐसे विषयों के साथ करो। जैसे फूल है, पेड़ है, रात के तारे है। वे इसे अनुचित दखल नहीं मानेंगे। वे एतराज नहीं उठाएंगे। बल्कि वे इसे पंसद करेंगे। उन्हें बहुत अच्छा लगेगा। वे इसका स्वागत करेंगे।

तो पहले उनके साथ प्रयोग करो और फिर अपनी पत्नी, अपने बच्चे, अपने प्रियजनों के साथ। कभी अपने बच्चे को गोद में उठा लो और उसको आँख के द्वारा देखो। बच्चा इसे समझेगा, सराहेंगे। वह अन्य किसी से भी ज्यादा समझेगा। क्योंकि अभी समाज ने उसे पंगु नहीं बनाया है। विकृत नहीं किया है। वह अभी सहज है। तुम अगर उसे आँख के द्वारा देखोगें तो उसे प्रगाढ़ प्रेम की अनुभूति होगी। उसे तुम्हारी उपस्थिति का एहसास होगा।

अपने प्रेमी या प्रेमिका को ऐसे देखो। और फिर जैसे-जैसे तुम्हें इस बात की पकड़ आएगी। जैसे-जैसे तुम इसमें कुशल होगे वैसे-वैसे तुम धीरे-धीरे दूसरों को भी देखने में समर्थ हो जाओगे। क्योंकि तब किसी को पता नहीं चलेगा कि तुमने इस गहराई से उसे देखा । और जब अपनी इंद्रियों के पीछे सतत सजग होकर खड़े होगे की कला तुम्हारे हाथ आ जायेगी। तो इंद्रियाँ तुम्हें धोखा न दे पाएंगी। अन्यथा इंद्रियाँ धोखा देती है। ऐसे संसार में, जो सिर्फ भासता है। इंद्रियों ने तुम्हें उसे सच मानने का धोखा दिया है।

अगर तुम इंद्रियों के द्वारा देख सके। और सजग रह सके तो धीरे-धीरे संसार माया मालूम पड़ने लगेगा। स्वप्नवत मालूम पड़ने लगेगा। और तब तुम उसके तत्व में उसके मूल तत्व में प्रवेश कर सकोगे। यह मूल तत्व ही ब्रह्म है।

ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र, भाग-तीन

प्रवचन-39

विज्ञान भैरव तंत्र विधि—64 (ओशो)

''छींक के आरंभ में, भय में, खाई-खड्ड के कगार पर, युद्ध से भागने पर, अत्यंत कुतूहल में, भूख के आरंभ में और भूख के अंत में, सतत बोध रखो।''

''छींक के आरंभ में, भय में, ...

यह विधि देखने में बहुत सरल मालूम पड़ती है। छींक के आरंभ में, भय में, चिंता में, भूख के पहले या भूख के अंत में सतत बोध रखो।

बहुत सी बातें समझने जैसी है। छींकने जैसे बहुत सरल कृत्य भी उपाय की तरह काम में लाए जा सकते है। क्योंकि वे कितने ही सरल दिखे, दरअसल वे बहुत कठिन और जटिल होते है। और जो आंतरिक व्यवस्था है, वह बहुत नाजुक चीज है।

जब भी तुम्हें लगे कि छींक आ रही है, सजग हो जाओ। संभव है कि सजग होने पर छींक न आए, चली जाए। कारण यह है कि छींक गैर-स्वैच्छिक चीज है। अचेतन,गैर-स्वैच्छिक। तुम स्वेच्छा से, चाह कर नहीं छींक सकते हो। तुम जबरदस्ती नहीं छींक सकते हो। चाह कर कैसे छींक सकते हो?
मनुष्य कितना असहाय है। तुम चाह कर एक छींक भी नहीं ला सकते हो। तुम कितनी ही चेष्टा करो। तुम छींक नहीं ला सकते हो। एक मामूली सी छींक भी तुम चाह कर नहीं पैदा कर सकते हो। यह गैर-स्वेच्छा से, चाह कर नहीं आती। यह तुम्हारे मन के कारण नहीं घटित होती। यह तुम्हारे समग्र संस्थान से, समग्र शरीर से घटित होती है।

और दूसरी बात कि जब तुम छींक के आने के पूर्व सजग हो जाते हो—तुम उसे ला नहीं रहे हो। लेकिन जब वह अपने आप ही आ रही हो। तो केवल तुम सजग हो जाते हो। तो संभव है कि वह न आए। क्योंकि तुम उसकी प्रक्रिया में कुछ नयी चीज जोड़ रहे हो। सजगता जोड़ रहे हो। वह खो जा सकती है। लेकिन जब छींक खो जाती है। और तुम सावचेत रहते हो, तो एक तीसरी बात घटित होती है।

पहली तो बात कि छींक गैर-स्वैच्छिक है। तुम उसमें एक नयी चीज जोड़ते हो, सजगता जोड़ते हो। और जब सजगता आती है तो संभव है कि छींक न आए। अगर तुम सचमुच सजग होगे। तो वह नहीं आएगी। शायद छींक एकदम खो जाए। तब तीसरी बात घटित होती है। जो ऊर्जा छींक की राह से निकलने वाली थी वह अब कहां जाएगी।

वह ऊर्जा तुम्हारी सजगता से जुड़ जाती है। अचानक बिजली सी कौंधती है, और तुम ज्यादा सावचेत हो जाते हो। जो ऊर्जा छींक बनकर बाहर निकलने जा रही थे वही ऊर्जा तुम्हारी सजगता में जुड़ जाती है। और तुम अचानक अधिक सावचेत हो जाते हो। बिजली की उस कौंध में बुद्धत्व भी संभव है।

यही कारण है कि मैं कहता हूं कि ये चीजें इतनी सरल है कि व्यर्थ मालूम पड़ती है। उनके द्वारा होने वाली उपलब्धियों की चर्चा असंभव सी लगती है। सिर्फ छींक के जरिए कोई बुद्ध कैसे हो सकता है? लेकिन छींक सिर्फ छींक ही नहीं है; तुम भी उसमें पूरी तरह सम्मिलित हो। तुम जो भी करते हो या तुम्हें जो भी होता है, उसमें तुम भी पूरी तरह मौजूद होते हो। इसे फिर से देखा,इसका निरीक्षण करो। जब भी छींक आती है तो उसमें तुम समग्रता: होते हो—पूरे शरीर से होते हो, पूरे मन से होते हो। छींक सिर्फ तुम्हारी नाक में ही घटित नहीं होती। तुम्हारे शरीर का रोआं-रोआं उसमे सम्मिलित रहता है। एक सूक्ष्म कंपन, एक सूक्ष्म सिहरन पूरे शरीर पर फैल जाती है। और उसके साथ पूरा शरीर एकाग्र हो जाता है। और जब छींक तो सारा शरीर एक राहत महसूस करता है। विश्राम अनुभव करता है।

लेकिन छींक के साथ सजगता रखनी कठिन है। और यदि तुम उसमें सजगता जोड़ दोगे तो छींक नहीं आएगी। और यदि छींक आए तो जानना कि तुम सजग नहीं हो।

तो तुम्हें सजग रहना पड़ेगा।

''छींक के आरंभ में....।''

क्योंकि छींक यदि आ ही गयी तो कुछ नहीं किया जा सकता है। तीन यदि चल चुका तो तुम अब उसे बदल नहीं सकते हो। यंत्र चालू हो गया। ऊर्जा अब बाहर जाने के रास्ते पर है; उसे अब रोका नहीं जा सकता है। क्या तुम छींक को बीच में रोक सकते हो। तुम उसे बीच में नहीं रोक सकते हो।

आरंभ में ही सजग हो जाओ। जि क्षण तुम्हें उतैजना अनुभव हो, लगे की छींक आने वाली है। तभी सावचेत हो जाओ। अपनी आंखे बंद कर लो और ध्यानस्थ हो जाओ। अपनी समग्र चेतना को उस बिंदू पर ले जाओ जहां छींक की उत्तेजना अनुभव होती हो। ठीक आरंभ में ही सजग हो जाओ। छींक गायब हो जायेगी। और चूंकि छींक में तुम्हारा सारा शरीर सम्मिलित है, पूरा संयंत्र सम्मिलित है—और तुम उसी क्षण से सजग हो—वहां मन नहीं होगा। विचार नही होगा। ध्यान नहीं होगा। छींक में विचार ठहर जाते है।

यही कारण है कि अनेक लोग सुँघनी पसंद करते है। यह उन्हें निर्भार कर देता है। उनका मन ज्यादा विश्राम पूर्ण हो जाता है। क्यों? क्योंकि क्षण भर के लिए विचार ठहर जाते है। सुँघनी उन्हें निर्विचार की एक झलक देती है। सुँघनी सूंघने से जो छींक आती है। उसमे वह मन नी रह जाते है। शरीर ही हो जाते है। एक क्षण के लिए सिर विदा हो जाता है। और उन्हें बहुत अच्छा लगता है।

अगर तुम सुँघनी के आदी हो जाओ तो उसे छोड़ना बहुत मुश्किल होता है। यह धूम्रपान से भी ज्यादा गहरा व्यसन है; धूम्रपान उसके सामने कुछ भी नहीं है। सुँघनी ज्यादा गहरे जाती है। क्योंकि धूम्रपान सचेतन है और छींक अचेतन हे। इसलिए धूम्रपान छोड़ने से भी ज्यादा कठिन सुँघनी छोड़ना है। और धूम्रपान को बदलकर कोई दूसरा व्यसन ग्रहण किया जा सकता है। धूम्रपान के पर्याय है, लेकिन सुँघनी के पर्याय नहीं है। कारण यह है कि छींक सच में शरीर है, धूम्रपान के पर्याय है। लेकिन सुँघनी के पर्याय नहीं है। कारण यह है कि छींक सच में शरीर की एक अनूठी घटना है। इसके जैसी दूसरी चीज केवल काम कृत्य है, संभोग है।

शरीर शास्त्र की भाषा में जो लो सोचते है वे कहते है, कि संभोग कमेंद्रिय द्वारा छींकने जैसा ही है। और दोनों में समानता है। यद्यपि यह शत-प्रतिशत सही नहीं है। क्योंकि संभोग में और भी बहुत सी बातें सम्मिलित है। लेकिर आरंभ में,सिर्फ आरंभ में समानता है। तुम कुछ चीज नाक से बाहर निकलते हो और राहत महसूस करते हो। वैसे ही कुछ चीज कमेंद्रिय से बाहर निकालते हो और राहत अनुभव करते हो। दोनों ही कृत्य गैर-स्वैच्छिक है।

तुम संभोग में संकल्प के द्वारा नहीं उतर सकते हो। अगर कोशिश करोगे तो निष्फलता हाथ आयेगी। विशेषकर पुरूष तो जरूर निष्फल होगे। क्योंकि उनकी कमेंद्रिय को कुछ करना पड़ता है। पुरूष की कमेंद्रिय सक्रिय है। लेकिन तुम चाह कर उसे सक्रिय नहीं कर सकते हो। तुम जितनी चेष्टा करोगे, उतना ही असंभव होता जायेगा। यह अपने आप होता है। इसे तुम सचेत होकर नहीं कर सकते हो।

यही कारण है कि पश्चिम में संभोग एक समस्या बन गया है। पिछली आधी सदी के दौरान पश्चिम में काम संबंधी ज्ञान बहुत विकसित हुआ है। और हर एक आदमी इसके संबंध में इतना सचेत है कि संभोग अधिकाधिक असंभव हो रहा है।

अगर तुम सचेत हो तो संभोग असंभव हो जाएगा। अगर कोई व्यक्ति संभोग के समय सचेत रहे, तो वह जितना सचेत होगा उतना ही उसके लिए संभोग कठिन होगा। उसकी जननेंद्रिय में उत्तेजना ही नहीं होगी। उसे प्रयास से नहीं किया जा सकता है। और तुम जितना अधिक प्रयास करोगे उतनी ही मुश्किल हो जाएगी।

इस विधि का उपयोग काम-संभोग में भी किया जा सकता है। आरंभ में हीं, जब तुम्हें उतैजना आती मालूम हो, लेकिन वह अभी आयी नहीं हो, सिर्फ उसकी तरंगें मालूम पड़ती हो। तभी तुम सावचेत हो जाओ। तरंगें खो जायेगी। और वही ऊर्जा सजगता में गति कर जाएगी।

तंत्र ने इसका उपयोग किया है। तंत्र ने इसका कई ढंग से उपयोग किया है। एक सुंदर नग्न स्त्री ध्यान के विषय में रूप में बैठी होगी। और साधक उन नग्न स्त्री के सामने बैठकर उसके शरीर उसके रूप और अंग-सौष्ठव पर ध्यान करेगा। और अपने काम-केंद्र पर उतैजना उठने की प्रतीक्षा करेगा। और ज्यों ही जरा सी उत्तेजना महसूस होगी। वह अपनी आंखें बद कर लेगा। और उस स्त्री को भूल जायेगा। वह साध आंखें बंद कर लेगा और उत्तेजना के प्रति सजग हो जायेगा। और तब काम उर्जा सजगता में रूपांतरित हो जाती है। उसे नग्न स्त्री पर तभी तक ध्यान करना है जहां उत्तेजना महसूस हो। उसके बाद उसे आँख बद कर अपनी उत्तेजना पर आ जाना है। और वहीं सजग रहना है। ठीक वैसे ही जैसे छींक के प्रति किया जा सकता है।

और यह कौंध सी क्यों घटित होती है? कारण यह है कि वहां मन नहीं है। बुनियादी बात यह है कि अगर मन नहीं है। और तुम सजग हो, तो सतोरी घटित होगी;तुम्हें समाधि की पहली झलक मिलेगी।

विचार ही बाधा है। किसी भी ढंग से यदि विचार विलीन हो जाए तो बात बन जाती है। लेकिन सजगता के लिए विचार का विदा होना जरूरी है। विचार नींद में भी विलीन हो जाते है। तुम्हारे मूर्छित हो जाने पर भी विचार ठहर जाते है। इन हालातों में भी विचार विदा हो जाता है। लेकिन तब विचार के पीछे जो तत्व छिपा है उसके प्रति सजगता नहीं रहती है। इसलिए मैं ध्यान को निर्विचार चेतना कहता हूं। तुम निर्विचार और मूर्च्छित एक साथ हो सकते हो। लेकिन उसका कोई मूल्य नहीं है। और तुम विचार के साथ सचेतन भी हो सकते हो; वह तुम हो ही। इन दो चीजों को, चेतना और निर्विचार को इकट्ठा करो; जब वे मिलते है तो ध्यान घटित होता है,ध्यान का जन्म होता है।

और तुम इसका प्रयोग छोटी-छोटी चीजों के साथ भी कर सकते हो। सच तो यह है कि कोई भी चीज छोटी नहीं है। एक छींक भी अस्तित्वगत घटना है। अस्तित्व में कुछ भी बड़ा नहीं है, कुछ भी छोटा नहीं है। एक नन्हा सा परमाणु भी पूरे जगत को मिटा सकता है। और वैसे ही छींक है। जो कि अत्यंत छोटी चीज है। तुम्हें रूपांतरित कर सकती है।

तो चीजों को छोटी बड़ी की तरह मत देखो। न कुछ बड़ा है और न कुछ छोटा। अगर तुम्हारे पास गहरे देखने की दृष्टि है तो बहुत छोटी चीजें भी महत्वपूर्ण हो सकती है। परमाणुओं के बीच में ब्रह्मांड छिपे है। और तुम नहीं कह सकते हो कि परमाणु और बह्मांड़ में कौन बड़ा है। और कौन छोटा है। एक अकेला परमाणु अपने आप में ब्रह्मांड है, और बड़े से बड़ा बह्मांड़ भी परमाणुओं के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।

''छींक के आरंभ में, भय में......।''

जब तुम भयभीत अनुभव करते हो और भय प्रवेश करता है, जब तुम भय को प्रवेश करते देखो, ठीक उसी क्षण सजग हो जाओ। और भय विलीन हो जाएगा। बोध के साथ भय नहीं रह सकता है। जब तुम सावचेत हो तो भय भीत कैसे हो सकते? तुम तभी भयभीत होते हो जब होश खो देते हो। सच में कायर वह नह है जो डरा हुआ है; कायर वह है जो सोया हुआ है। और बहादुर वह है जो भय के क्षणों में बोध को जगा लेता है। और तब भय विदा हो जाता है।

जापान में वे योद्धा ओर को सजगता का प्रशिक्षण देते है। उनका बुनियादी प्रशिक्षण सजगता है। शेष सब चीजें गौण है। तलवार चलाना, तीर चलाना, सब गौण है।

झेन सदगुरू रिंझाई के संबंध में कहा जाता है कि वह कभी भी तीर चलाने में, तीन को ठीक निशाने पर मारने में सफल नहीं हुआ। उनका तीर सदा ही चूकता रहा। और वह महान धनुर्विद माने जाते थे।

तो पूछा जाता है कि रिंझाई सबसे महान धनुर्विद कैसे कहलाए। जब कि वे कभी लक्ष्य पर नहीं पहुंचे और सदा निशाना चूकते रहे। रिंझाई को मानने वाले कहते है: ''अंत नहीं आरंभ महत्वपूर्ण है। हम इसमे उत्सुक नहीं है कि तीर लक्ष्य पर पहुंच जाए। हम उसमें उत्सुक है जहां से तीन अपनी यात्रा शुरू करता है। हम रिंझाई में उत्सुक है। जब तीन धनुष से निकलता है तो वे सजग है; बस पर्याप्त है। परिणाम से कोई लेना-देना नहीं है।''

यह सूत्र कहता है: ''भय में चिंता में.....।''

जब तुम चिंता अनुभव करो, बहुत चिंताग्रस्त होओ। तब इस विधि का प्रयोग करो। इसके लिए क्या करना होगा? जब साधारणत: तुम्हें चिंता घेरती है। तब तुम क्या करते हो? सामान्यत: क्या करते हो? तुम उसका हल ढूंढते हो; तुम उसके उपाय ढूंढते हो। लेकिन ऐसा करके तुम और भी चिंताग्रस्त हो जाते हो, तुम उपद्रव को बढ़ा लेते हो। क्योंकि विचार से चिंता का समाधान नहीं हो सकता। विचार के द्वारा उसका विसर्जन नहीं हो सकता। कारण यह है कि विचार खुद एक तरह कि चिंता है। विचार करके दलदल और भी धँसते जाओगे। यह विधि कहती है। कि चिंता के साथ कुछ मत करो;सिर्फ सजग होओ। बस सावचेत रहो। मैं तुम्हें एक दूसरे झेन सदगुरू बोकोजू के संबंध मे एक पुरानी कहानी सुनाता हूं। वह एक गुफा में अकेला रहता था। बिलकुल अकेला लेकिन दिन में या कभी-कभी रात में भी, वह जोरों से कहता था, ''बोकोजू।'' यह उसका अपना नाम था और फिर वह खुद कहता, ''हां महोदय, मैं मौजूद हूं।'' और वहां कोई दूसरा नहीं होता था। उसके शिष्य उससे पूछते थे, ''क्यों आप अपना ही नाम पुकारते हो। और फिर खुद कहते हो, हां मौजूद हूं?

बोकोजू ने कहा, जब भी मैं विचार में डूबने लगता है। तो मुझे सजग होना पड़ता है। और इसीलिए मैं अपना नाम पुकारता है। बोकोजू। जिस क्षण मैं बोकोजू कहता हूं,और कहता हूं कि हां महाशय, मैं मौजूद हूं, उसी क्षण विचारण, चिंता विलीन हो जाती है।

फिर अपने अंतिम दिनों में, आखरी दो-तीन वर्षों में उसके कभी अपना नाम नहीं पुकारा, और न ही यह कहा कि हां, मैं मौजूद हूं। तो शिष्यों ने पूछा, गुरूदेव, अब आप ऐसा क्यों करते है। बोकोजू ने कहा: '' अब बोकोजू सदा मौजूद रहता है। वह सदा ही मौजूद है। इसलिए पुकारने की जरूरत रही। पहले मैं खो जाया करता था। और चिंता मुझे दबा लेती थी। आच्छादित कर लेती थी। बोकोजू वहां नहीं होता था। तो मुझे उसे स्मरण करना पड़ता था। और स्मरण करते ही चिंता विदा हो जाती है।

इसे प्रयोग करो। बहुत सुंदर विधि है। अपने नाम का ही प्रयोग करो। जब भी तुम्हें गहन चिंता पकड़े तो अपना ही नाम पुकारों—बोकोजू या और कुछ, लेकिन अपना ही नाम हो—और फिर खुद ही कहो कि हां महोदय, मैं मौजूद हूं। और तब देखो

कि क्या फर्क है। चिंता नही रहेगी। कम से कम एक क्षण के लिए तुम्हें बादलों के पार की एक झलक मिलेगी। और फिर वह झलक गहराई जा सकती है1 तुम एक बार जान गए कि सजग होने पर चिंता नहीं रहती। विलीन हो जाती है। तो तुम स्वयं के संबंध में, अपनी आंतरिक व्यवस्था के संबंध में गहन बोध को उपलब्‍ध हो गए।

‘’खाई-खड्ड के कगार पर, युद्ध से भागने पर, अत्यंत कुतूहल में, भूख के आरंभ में और भूख के अंत में। सतत बोध रखो।‘’

किसी भी चीज का उपयोग कर सकते हो। भूख लगी है, सजग हो जाओ। जब तुम्हें भूख महसूस होती है। तो तुम क्या करते हो। तुम्हें क्या होता है? जब तुम्हें भूख लगती है तो तुम उसे कभी ऐसे नहीं देखते कि तुम्हें कुछ हो रहा है; तुम भूख ही हो जाते हो। तब तुम समझते हो कि मैं भूख हूं। ऐसा ही लगता है कि मैं भूख हूं। लेकिन तुम भूख नहीं हो। तुम्हें सिर्फ भूख का बोध होता है। भूख कहीं परिधि पर घटित होती है। और तुम केंद्र हो; तुम्हें भूख घटित हो रही है। तुम तब भी थे जब भूख नहीं थी। और तुम जब भी रहोगे जब भूख नहीं होगी। भूख एक घटना है; वह तुम्हें घटित हो रही है।

उसके प्रति सजग होओ। तब तुम भूख से तादात्म्य नहीं करोगे। अगर तुम्हें भूख लगी है तो उसके प्रति सजग होओ। भूख उतनी ही तुम्हें दूर मालूम पड़ेगी। और जितनी सजगता कम होगी भूख उतनी ही पास मालूम पड़ेगी। और अगर तुम बिलकुल सजग नहीं हो तो तुम ठीक केंद्र पर अनुभव करोगे कि मैं भूख हूं। सजग होते ही भूख तुम से दूर हट जाती है। भूख वहां है और तुम वहां हो। भूख विषय है; तुम साक्षी हो।

इसी विधि के लिए उपवास का प्रयोग किया जा सकता है। और जैन सिर्फ उपवास कर रहे है, इस विधि के बिना ही उपवास कर रहे है। तब यह मूढ़ता है। तब तुम सिर्फ भूखे मर रहे हो। और इससे कोई लाभ नहीं मिल सकता है। तुम महीनों भूखे रह सकते हो। और भूख से जुड़े रह सकते हो। कि मैं भूख हूं। तब वह व्यर्थ है, हानिकर है।

उपवास करने की कोई जरूरत नहीं है। तुम रोज ही भूख को अनुभव कर सकते हो। लेकिन कठिनाइयां है। और इसीलिए उपवास उपयोगी हो सकता है। सामान्यत: हम भूख लगने के पहले ही अपने को भोजन से भर लेते है। आधुनिक संसार मे भूख लगने की जरूरत ही नहीं पड़ती है। तुम्हारे भोजन के समय निश्चित है। और तुम भोजन कर लेते हो। तुम कभी नहीं पूछते कि शरीर को भूख लगी है। या नहीं; निश्चित समय पर तुम भोजन कर लेते हो। नहीं तुम कहोगे की जब एक बजता है तो मुझे भूख लग जाती है। वह झूठी भख हो सकती है। वह इसलिए लगती है क्योंकि यह तुम्हारे खाने का समय है, एक बजा है। किसी दिन एक खेल करो; अपनी पत्नी या अपने पति को कहो कि घड़ी का समय बदल दे। अभी बाहर बजा है और घड़ी एक का समय बता रही है। तुम्हें तुरंत भूख लग जाती है। तुम्हें घड़ी देख कर भूख लगती है। यह कृत्रिम भूख है। झूठी भूख है; यह भूख सच्ची नहीं है।

इसीलिए उपवास सहयोगी हो सकता है। अगर तुम उपवास करोगे तो दो तीन दिन तक झूठी भूख मालूम होगी। तीसरे या चौथे दिन के बाद ही सच्ची भूख का पता चलेगा। तब वह मांग तुम्हारे शरीर की होगी। मन की नहीं। जग मन मांग करता है। तो वह झूठी मांग है, शरीर की मांग ही सच्ची होती है। और जब तुम सच्ची भूख के प्रति सजग होते हो तो अपने शरीर से सर्वथा भिन्‍न हो जाते हो। भूख एक शारीरिक घटना है। और जब एक बार तुम जान लेते हो कि भूख मुझसे भिन्‍न है, मैं उसका साक्षी हूं, तो तुम शरीर के पार चले गए।

लेकिन तुम किसी भी चीज का उपयोग कर सकते हो। ये तो उदाहरण मात्र है। यह विधि अनेक ढंगों से प्रयोग में लाई जा सकती है। तुम अपना अलग ढंग भी निर्मित कर सकते हो। लेकिन किसी एक ही चीज पर सतत प्रयोग करते रहो। अगर तुम भूख के साथ प्रयोग कर रह हो तो कम से कम तीन महीने तक भूख के साथ प्रयोग करो। तो ही तुम किसी दिन शरीर से तादात्म्य तोड़ सकेत हो। रोज-रोज विधि मत बदलों, क्योंकि विधि का गहरे जाना जरूरी है। तीन महीने के लिए किसी विधि को चुन लो और उससे लगन से लगे रहो। विधि का प्रयोग करो; और प्रयोग जारी रखो।

और सदा स्मरण रखो कि आरंभ में बोधपूर्ण होना है। बीच में बोधपूर्ण होना बहुत कठिन होगा। क्योंकि इस तादात्म्य के स्थापित होते ही कि मैं भूखा हूं। तुम उसे फिरा बदल नहीं सकोगे। मन के तल पर तुम बदलाहट कर सकत हो, तुम कह सकते हो कि नहीं , मैं भूख नहीं हूं, साक्षी हूं। लेकिन वह झूठ होगा। वह मन ही बोल रहा है। वह तुम्हारे प्राण नहीं बोल रहे हे। और यह भी स्मरण रहे कि तुम्हें यह कहना नहीं है कि मैं भूख नहीं हूं। यह भी मन का धोखा देने का ढंग है। तुम कह सकते हो: ''भूख है, लेकिन मैं भूखा नहीं हूं। मैं शरीर नहीं हूं। मैं ब्रह्म हूं।''

तुम्हें कुछ भी कहना नहीं है। तुम जो भी कहोगे गलत होगा। क्योंकि तुम गलत हो। यह दोहराना कि मैं शरीर हूं। किसी काम का नह है। तुम कहते रहो कि मैं शरीर हूं, क्योंकि तुम जानते हो कि मैं शरीर हूं। किसी काम का नहीं है। अगर तुम सच ही जानते हो कि मैं शरीर नहीं हूं, तो यह कहने की क्या जरूरत है। कोई जरूरत नहीं है, यह मूढ़ता मालूम होगी। बोधपूर्ण होओ,और तब उस बोध में यह भाव प्रगाढ़ होगा कि मैं शरीर नहीं हूं। यह विचार नहीं होगा, भाव होगा। यह तुम्हारे सिर की नहीं, तुम्हारे पूरे प्राणों की अनुभूति होगी। तुम दूरी महसूस करोगे। कि शरीर बहुत दूर है। और मैं उससे बिलकुल भिन्न हूं। और दोनों के मिश्रण की संभावना भी नहीं है। तुम दोनों को मिला नह सकते हो। शरीर-शरीर है, पदार्थ है; और तुम चैतन्य हो। वे दोनों साथ रह सकते है1 लेकिन एक दूसरे में घुल मिल नहीं सकते है। उनका मिश्रण नहीं हो सकता है।

ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र, भाग-तीन

प्रवचन-41

विज्ञान भैरव तंत्र विधि—65 (ओशो)

''अन्य देशनाओं के लिए जो शुद्धता है वह हमारे लिए अशुद्धता ही है। वस्तुतः किसी को भी शुद्ध या अशुद्ध की तरह मत जानों।''

शुद्ध या अशुद्ध की तरह मत जानों।''

यह तंत्र का एक बुनियादी संदेश है। तुम्हारे लिए यह बड़ी कठिन धारणा होगी; क्योंकि यह बिलकुल ही गैर-नैतिक धारणा है। मैं इसे अनैतिक नहीं कहूंगा। क्योंकि तंत्र को नीति-अनीति से कुछ लेना देना नहीं है। तंत्र कहता है कि शुद्धि-अशुद्धि से कोई

मतलब नहीं है। इसकी देशना तुम्हें शुद्ध-अशुद्धि के उपर उठने में, दरअसल विभाजन के, द्वंद्व और द्वैत के पार जाने में सहयोग देने के लिए है।

तंत्र कहता है कि अस्तित्व अखंड है, अस्तित्व एक है। और जो द्वंद्व है वह सब-स्मरण रहे, सब के सब—मनुष्य के बनाए हुए है। द्वंद्व नैतिक-अनैतिक, पाप-पूण्य ये सारी धारणाएं मनुष्य ने निर्मित की है। ये मनुष्य की मान्यताएं है, ये यथार्थ नहीं है। क्या शुद्ध है और क्या अशुद्ध है। यह तुम्हारी व्याख्या पर निर्भर करता है।
नीत्से ने कहीं कहा है कि सब नैतिकता व्याख्या है।

तो कोई चीज इस देश में नैतिक हो सकती है और वही चीज पड़ोसी देश में अनैतिक कहो सकती है। एक ही चीज मुसलमान के लिए नैतिक हो सकती है और हिंदू के लिए अनैतिक हो सकती है। एक ही चीज ईसाई के लिए नैतिक और जैन के लिए अनैतिक हो सकती है। या जो चीज पुरानी पीढ़ी के लिए नैतिक था, नई पीढ़ी के लिए अनैतिक हो सकती है। यह दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। यह रुझान की बात है। बुनियादी रूप से ये एक मान्यता है। झूठ है। तथ्य बस तथ्य है। वह न नैतिक होता है, न अनैतिक होता है। न शुद्ध और न ही अशुद्ध।

अगर विभाजन संसार को ही नहीं बाँटता है, विभाजन करने वाले को भी बांट देता है। अगर तुम बांटते हो तो उसमें तुम खुद भी बंट जाते हो। और जब तक तुम बह्म विभाजनों को नहीं भूलते,तब तक तुम अपने आंतरिक विभाजनों को अतिक्रमण नहीं कर सकते हो। जो कुछ तुम संसार के साथ करते हो, तुम उसे अपने साथ पहले ही कर लेते हो।

सिद्ध योग के महान सदगुरू नरोपा ने कहा है: ‘’इंच भर विभाजन भी किया, तो स्वर्ग और नरक अलग-अलग हो जाते है। इंच भर का विभाजन। लेकिन हम बांटते है, नाम देते है, निंदा करते है। औचित्य सिद्ध करते है। आस्तित्व के शुद्ध तथ्य को देखो। और कोई नाम मत दो, कोई लेबल मत दो। केवल तभी तंत्र की देशना को समझ सकते हो। तथ्य को भला या बुरा मत कहो। तथ्य पर अपने चित को मत उतारों। ज्यों ही तुम तथ्य पर अपनी धारणा आरोपित करते हो, तुम झूठ का निर्माण कर लेते हो। अब यह तथ्य न रहा, सत्य न रहा; यह तुम्हारा प्रक्षेपण हो गया।

यह सूत्र कहता है: ‘’अन्य देशनाओं के लिए जो शुद्धता है वह हमारे लिए अशुद्धता ही है। वस्तुत: किसी को भी शुद्ध या अशुद्ध की तरह मत जानो।

तंत्र कहता है कि जो चीज अन्य देशनाओं के लिए बहुत शुद्ध मानी जाती है, पुण्य मानी जाती है। वह हमारे लिए पाप है। क्योंकि उनकी शुद्धता की धारणा बाँटती है; उनके लिए कुछ शुद्ध है कुछ अशुद्ध।

अगर तुम किसी को संत कहते हो तो तुमने किसी को पापी बना दिया। अब तुम्हें कहीं ने कहीं किसी न किसी को निंदित करना होगा। क्योंकि संत पापी के बिना हो नहीं सकता। अब हमारे प्रयत्नों की व्यर्थता देखो। हम पापियों को मिटाने में लगे है। और हम एक ऐसी दुनियां की आशा करते है जहां पापी नहीं होगें। सिर्फ संत होगे। यह अर्थ हीन है। क्योंकि संत पापी के बिना नहीं हो सकता। वे एक ही सिक्के के दो पहलू है। तुम सिक्के के एक पहलू को नहीं मिटा सकते; दोनों साथ ही रहेगें। पापी और पुण्यात्मा भी संसार में विदा हो जायेंगे। लेकिन घबराओ मत; उन्हें विदा होने दो। वे किसी मूल्य के नहीं सिद्ध हुए है।

पापी और संत एक ही व्याख्या के, जगत के प्रति एक ही दृष्टिकोण के अंग है। यह दृष्टि कहता है कि यह शुभ है और वह अशुभ है। और तुम यह नहीं कह सकते कि यह अच्छा है। अगर तुम यह न कहो कि यह बुरा है। शुभ की परिभाषा के लिए अशुभ जरूरी है। शुभ अशुभ पर निर्भर करता है। पुण्य पाप पर निर्भर करता है। तुम्हारे महात्मा असंभव है, वे पापियों के बिना नहीं हो सकते। उन्हें तो पापियों का अहसान मानना चाहिए; वे उनके बिना जी नहीं सकते। वे चाहे पापियों की जितनी

भी निंदा क्यों न करे। वे और पापी एक ही घटना के अंग है। पापी संसार से तभी विदा होंगे जब महात्मा विदा होंगे। उनके पहल नहीं और पूण्य की धारण के बिना पाप नहीं टिक सकता है।

तंत्र कहता है कि तथ्य असली बात है; और व्याख्या झूठ है। व्याख्या मत करो।

वस्तुत: किसी को भी शुद्ध या अशुद्ध सत्य पर थोपी गई हमारी व्याख्याएं है। हमारे दृष्टिकोण है। इसे प्रयोग करो। यह विधि कठिन है, सरल नहीं है। कारण यह है कि हम द्वैत मूलक विचारण से इतने ग्रस्त है। उसमे इतने डूबे है कि हमें इसका भी पता नहीं रहता कि हम किसकी निंदा कर रहे है। और किसको उचित कह रहे है। अगर कोई व्यक्ति यहां धूम्रपान करने लगे तो तुम सचेतन रूप से कुछ जाने बिना ही उसे निंदित कर दोगे; तुम अपने अंतस में उसकी निंदा कर डालोगे। तुम्हारी दृष्टि में निंदा हो चाहे न हो। तुमने व्यक्ति पर नजर भी नहीं डाली हो, लेकिन तुमने निंदा कर दी।

यह विधि कठिन होगी। क्योंकि हमारी इतनी गहन आदत है। प्रगाढ़ है। तुम महज अपनी भाव-भंगिमा से, अपने बैठने-उठने से किसी को निंदित कर देते हो। किसी को सही बताते हो, और इसका होश भी नहीं रहता कि तुम क्या कर रहे हो। तुम जब किसी आदमी को देखकर मुस्कराते हो या नहीं मुस्कराते हो। जब तुम किसी को देखते हो या नहीं देखते हो, तुम उसकी उपेक्षा करते हो, तो तुम क्या कर रहे हो। तुम अपनी पंसद-नापसंद आरोपित कर रहे हो। जब तुम कहते हो कि कोई चीज सुंदर है तो तुम्हें किसी चीज को कुरूप कहना ही होगा। और यह बांटने वाली दृष्टि साथ ही साथ तुम्हें भी बांट रही है। तुम्हारे भीतर दो व्यक्ति हो जाएंगे।

अगर तुम कहते हो कि कोई व्यक्ति क्रोध मे है और क्रोध बुरा है तो तुम तब क्या करोगे। तुम कहोगे कि क्रोध बुरा है। तब समस्याएं खड़ी होंगी। क्योंकि तुम कहते हो कि यह बुरा है, मुझमें जो क्रोध है यह बुरा है। तब तुम अपने को दो व्यक्तियों में बांटने लगे। एक बुरा व्यक्ति होगा। पापी होगा। और दूसरा भला व्यक्ति होगा। महात्मा होगा। निश्चित ही, तुम अपने को भीतर का महात्मा मानोगे। और भीतर के पापी की निंदा करोगे। तुम दो में विभाजित हो गए। अब निरंतर लड़ाई चलेगी। संघर्ष होगा। अब तुम व्यक्ति न रहे, अब तुम भीड़ हो गये। तुम्हारे भीतर एक गृह युद्ध चलेगा। अब मौन गया, शांति गई। तुम तनाव और संताप से भर जाओगे। यही तुम्हारी हालत है। लेकिन तुम्हें पता नहीं है कि ऐसा क्यों है? विभाजित व्यक्ति शांत नहीं हो सकता। कैसे हो सकता है? तुम अपने शैतान को कहां रखोगे? तुम्हें उसे मिटाना होगा। लेकिन यह तुम ही हो; तुम उसे मिटा नहीं सकते। तुम दो नहीं हो; सच्चाई एक है, यथार्थ एक है। लेकिन अपनी बांटने वाल दृष्टि के कारण तुमने बाह्म यथार्थ को बांट दिया, और उसके अनुसार भीतरी यथार्थ भी बंट गया। इसलिए हर एक आदमी स्वयं से ही लड़ रहा है।

यह ऐसा ही है जैसे कि हम अपने ही दोनों को लड़ाएं। बायां हाथ दाएं हाथ से लड़े। दायां हाथ बाएं हाथ से लड़े। और ऊर्जा एक ही है। और बाएं दाएं हाथों मे एक ही ऊर्जा बह रही है। मैं ही दोनों हाथों में बह रहा हूं। और एक ही संघर्ष,एक झूठा संघर्ष खड़ा कर रहा हूं। कभी में अपने बाएं हाथ को धोखा दे सकता हूं, और मेरा दायां हाथ जीत सकता है। और कभी में दाएं हाथ को हरा सकता हूं। परंतु सच में दोनों मैं ही हूं।

तो तुम कितना ही सोचो कि मेरे भीतर का संत जीत गया और शैतान हार गया,स्मरण रहे कि तुम किसी भी क्षण जगहें बदल सकते हो, और तब संत नीचे होगा और शैतान ऊपर होगा। इससे ही भय पैदा होता है, असुरक्षा का भाव पैदा होता है; क्योंकि तुम जानते हो कि कुछ भी निश्चित नहीं है। तुम जाने हो कि इस समय मैं प्रेमपूर्ण हूं और अपनी घृणा को दबा दिया है। लेकिन तुम जानते हो कि घृणा क्षण भर में उपर आ जायेगी। और प्रेम नीचे दब जायेगा। क्योंकि भीतर तुम दो हो।

तंत्र कहता है कि खंड मत करो। और केवल तभी तुम जीत सकते हो।

अखंड कैसे हुआ जाए? निंदा मत करो; मत कहो कि यह अच्छा है और वह बुरा है। शुद्धता और अशुद्धता की सभी धारणाओं को विदा कर दो। संसार को देखो। लेकिन मत कहो कि यह क्या है। अज्ञानी रहो। बहुत बुद्धिमानी मत दिखाओं। कुछ धारणा मत बनाओ। चुप रहो; न निंदा करो और न प्रशंसा। अगर तुम संसार के संबंध में मौन रह सकते हो धीरे-धीरे यह मौन तुम्हारे भीतर भी प्रवेश कर जाएगा। और अगर बाहर का विभाजन समाप्त हो जाए तो भीतर का विभाजन भी समाप्ति हो जाएगा। क्योंकि दोनों साथ ही हो सकते है। लेकिन यह बात समाज के लिए खतरनाक है। यही कारण है कि तंत्र का दमन हुआ, उसे दबाया गया। समाज के लिए यह दृष्टि खतरनाक है। कुछ भी अनैतिक नहीं है। कुछ भी नैतिक नहीं है। कुछ शुद्ध नहीं है, कुछ भी अशुद्ध नहीं है। चीजें जैसी है वैसी है। एक सच्चा तांत्रिक यह नहीं कहेगा कि चोर बुरा है; वह इतना ही कहेगा कि वह चोर है; बस। और उसे चोर कहने में उसके मन में निंदा नहीं होगी। अगर कोई कहता है कि यह आदमी महान संत है तो तांत्रिक कहेगा; हां यह संत है। लेकिन उसे संत कहने में कोई मूल्यांकन नहीं है; वह यह नहीं कहेगा कि यह अच्छा है। यह कहेगा; ठीक है, यह संत है और वह चोर है। यह कहना ऐसा ही है जैसे यह कहना कि यह गुलाब है और वह गुलाब नहीं है। यह वृक्ष बड़ा है,वह छोटा है। कि रात काली है और दिन उजला है। इसमें कोई तुलना नहीं है।

लेकिन यह खतरनाक है। समाज एक की निंदा और दूसरे की प्रशंसा किए बिना नहीं रह सकता है। समाज नहीं रह सकता। क्योंकि समाज द्वैत पर खड़ा है। इसलिए तंत्र का दमन किया गया। उसे समाज विरोधी समझा गया। तंत्र समाज-विरोधी नहीं है। बिलकुल नहीं है। लेकिन अद्वैत कि दृष्टि सामाजिक धारणाओं का अतिक्रमण कर जाती है। वह समाज विरोधी नहीं है। वह समाज का अतिक्रमण है। समाज के पार उठ जाना है।

इसे प्रयोग करो। किसी मूल्यांकन के बिना, केवल स्वाभाविक तथ्यों के साथ, कि अमुक यह है और अमुक वह है। संसार में चलो। और धीरे-धीरे तुम्हें अपने भीतर एक अखंडता अनुभव होगी, तुम्हारे विपरीत शब्द, तुम्हारे विरोध, तुम्हारी अच्छाई-बुराई सब इकट्ठे हो जाएंगे। वे एक में मिल जाएंगे। और तुम एक इकाई बन जाओगे। तब न कुछ शुद्ध होगा और न कुछ अशुद्ध होगा। तुम यथार्थ को सीधे जानते हो।

''अन्य देशनाओं के लिए जो शुद्धता है वह हमारे लिए अशुद्धता ही है।''

तंत्र कहता है कि जो दूसरों के लिए बुनियादी बात है वह हमारे लिए जहर है। उदाहरण के लिए। अहिंसा पर आधारित देशनाएं है। जो कहती है कि हिंसा अशुभ है। और अहिंसा शुभ है। तंत्र कहता है कि हिंसा-हिंसा है। और अहिंसा-अहिंसा है। न कुछ बुरा है और न कुछ भला। कुछ देशनाएं ब्रहमचर्य पर आधारित है। वे कहती है ब्रहमचर्य शुभ है। लेकिन यह तथ्य मात्र है। इनका मूल्यों से कुछ लेना देना नहीं है। तंत्र यह कभी नहीं कहेगा कि ब्रहमचारी अच्छा है। और जो कामवासना में डूबा है वह बुरा है। तंत्र यह कभी नहीं कहेगा। चीजें जैसी है तंत्र उन्हें वैसे ही स्वीकार करता है। और क्यों? सिर्फ तुम्हारे भीतर अखंडता निर्मित करने के लिए।

यह विधि तुम्हारे भीतर एक अखंडता निर्मित करने के लिए है। तुम्हारे भीतर एक समग्र,अखंड, द्वंद्व रहित ओर विरोध रहित सत्ता पैदा करने के लिए है। केवल तब ही मौन संभव है। जो व्यक्ति किसी वृति से भागता है वह कभी शांत नहीं हो सकता। कैसे हो सकता है? और जो अपने भीतर खंडित है, स्वयं से ही लड़ रहा है। वह जीत कैसे सकता है। यह असंभव है। तुम ही दोनों हो, फिर जीत किसकी होगी? किसी कि भी जीत नहीं होगी। तुम्हारी ही हार होगी। क्योंकि लड़ने में तुम्हारी ऊर्जा नष्ट होगी।

यह विधि तुम में एक अखंडता निर्मित करेगी। मूल्यों को जाने दो; निर्णय मत लो। जीसस ने कहीं कहा है: ''दूसरे के संबंध में कोई निर्णय मत लो, ताकि तुम्हारे संबंध में भी निर्णय न लिया जाए।'' लेकिन यहूदियों के लिए इसे समझना असंभव हो गया। क्योंकि यहूदियों का सारा चिंतन नैतिकता पर निर्भर है। यह शुभ है और वह अशुभ है। जीसस इस उपदेश में—कोई

निर्णय मत लो। तंत्र की भाषा बोल रहे है। यदि उनकी हत्या कर दी गई, उन्हें सूली पर लटकाया गया, तो उसका कारण यह उपदेश था। उनकी दृष्टि तंत्र की दृष्टि थी: ''कोई निर्णय मत लो।''

तो मत कहो कि वेश्या बुरी है। कौन जानता है? और मत कहो कि महात्मा अच्छा है कौन जानता है? और अंततः तो दोनों एक ही खेल के अंग है। वे एक दूसरे पर निर्भर है, परस्पर जुड़े है। इसलिए जीसस कहते है: कोई निर्णय मत लो। और यही शिक्षा इस सूत्र में है: 'दूसरे के संबंध में कोई निर्णय मत लो, ताकि तुम्हारे संबंध में निर्णय न लिया जा सके।'

अगर तुम कोई निर्णय नहीं लेते हो, कोई नैतिक दृष्टिकोण नहीं अपनाते हो तो, तथ्यों को वैसे ही देखते हो जैसे वे है। अपने हिसाब से उनकी व्याख्या नहीं करते हो, तो तुम्हारे संबंध में भी निर्णय नहीं लिया जाएगा।

तुम पूरी तरह रूपांतरित हो गए हो। अब कोई सत्ता तुम्हारे संबंध में निर्णय नहीं लेगी; उसकी जरूरत न रही। तुम स्वयं दिव्य हो गए; तुम स्वयं परमात्मा हो गए।

तो साक्षी बनो, न्यायाधीश नहीं।

ओशो

विज्ञान भैरव तंत्र, भाग-तीन

प्रवचन-41

विज्ञान भैरव तंत्र विधि—66 (ओशो)

'मित्र और अजनबी के प्रति, मान और अपमान में, असमता और समभाव रखो।'

'मित्र और अजनबी के प्रति, मान और अपमान में, असमता और समभाव रखो।'—osho

'असमता के बीच समभाव रखो।' यह आधार है। तुम्हारे भीतर क्या घटित हो रहा है। दो चीजें घटित हो रही है। तुम्हारे भीतर कोई चीज निरंतर वैसी ही रहती है; वह कभी नहीं बदलती। शायद तुमने इसका निरीक्षण न किया हो। शायद तुमने अभी इसका साक्षात्कार न किया हो। लेकिन अगर निरीक्षण करोगे तो जानोंगे कि तुम्हारे भीतर कुछ है जो निरंतर वही का वही रहता है। उसी के कारण तुम्हारा एक व्यक्तित्व होता है। उसी के कारण तुम अपने को केंद्रित अनुभव करते हो; अन्यथा तुम एक अराजकता हो जाओगे।

तुम कहते हो; 'मेरा बचपन।' अब इस बचपन का क्या बच रहा है? यह कौन है जो कहता है: 'मेरा बचपन' यह मेरा, मुझे, मैं कौन है। तुम्हारे बचपन का तो कुछ भी शेष नहीं बचा है। यदि तुम्हारे बचपन के चित्र तुम्हें पहली दफा दिखाए जाये तो तुम उन्हें पहचान भी नहीं सकोगे। सब कुछ इतना बदल गया है। तुम्हारा शरीर अब वही नहीं है। उसकी एक कोशिश भी वही नहीं है।
शरीर शास्त्री कहते है कि शरीर एक प्रवाह है—सरित-प्रवाह। प्रत्येक क्षण अनेक पुरानी कोशिकाएं मर रही है। और अनेक नई कोशिकाएं बन रही है। सात वर्षों के भीतर तुम्हारा शरीर बिलकुल बदल जाता है। अगर तुम सत्तर साल जीने वाल हो तो इस बीच तुम्हारा शरीर दस बार बदल जायेगा। पूरा का पूरा बदल जाता है। प्रत्येक क्षण तुम्हारा शरीर बदल रहा है।

और तुम्हारा मन बदल रहा है। जैसे तुम अपने बचपन के शरीर का चित्र नहीं पहचान सकते हो वैसे ही यदि तुम्हारे बचपन के मन का चित्र बनाना संभव हो तो तुम उसे भी नहीं पहचान पाओगे। तुम्हारा मन तो तुम्हारे शरीर से भी ज्यादा प्रवाहमान है। हर एक क्षण में बदल जाता है। एक क्षण के लिए भी कुछ स्थाई नहीं है। ठहरा हुआ नहीं है। मन के तल पर सुबह तुम कुछ थे; शाम तुम बिलकुल ही भिन्न व्यक्ति हो जाते हो।

जब भी कोई व्यक्ति बुद्ध से मिलने आता था तो उसे विदा होते समय बुद्ध उससे कहते थे: ''स्मरण रहे, जो व्यक्ति मुझ से मिलने आया था वही आदमी वापस नहीं जा रहा है। तुम अब बिलकुल भिन्न आदमी हो। तुम्हारा मन बदल गया है।

बुद्ध जैसे व्यक्ति से मिलकर तुम्हारा मन वही नहीं रह सकता, उसकी बदलाहट अनिवार्य है—वह बदलाहट चाहे भले के लिए हो या बुरे के लिए। तुम एक मन लेकिर वही गये थे; तुम भिन्न ही मन लेकिर वहां सक वापस आओगे। कुछ बदल गया है। कुछ नया उससे जुड़ गया है। कुछ पुराना उससे अलग हो गया है।

और अगर तुम किसी से नहीं भी मिलते हो, बस अपने साथ अकेले रहते हो, तो भी तुम वही नहीं रह सकते। पल-पल नदी वह रही है। हेराक्लाइटस ने कहा है कि तुम एक ही नदी में दो बार नहीं प्रवेश कर सकते। यही बात मनुष्य के संबंध में सही है। तुम एक ही मनुष्य से दो बार नहीं मिल सकते । असंभव है यह। और इसी तथ्य के कारण—और इसके प्रति हमारे अज्ञान के कारण—हमारा जीवन संताप बन जाता है। क्योंकि तुम्हारी अपेक्षा रहती है। कि दूसरा सदा वही रहेगा।

तुम अपने शरीर को देखो, वह बदल रहा है। तुम अपने मन को समझो, वह भी बदल रहा है। कुछ भी वही का वही नहीं रहता है। वहां तक की लगातार दो क्षणों के लिए भी कुछ तुमने अपने मित्र को अजनबी की भांति नहीं देखा है तो तुमने देखा ही नहीं है। अपनी पत्नी को देखा; क्या तुम सच ही उसको जानते हो? हो सकता है तुम उसके साथ बीस वर्षों से, या उसे भी ज्यादा समय से रह रहे हो। लेकिन वह अजनबी ही रहती है। तुम जितना ज्यादा उसके साथ रहते हो उतनी ही संभावना है अपरिचित ही रहो। तुम उससे कितना ही प्रेम करते हो उससे कुछ फर्क नहीं पड़ता।

सच तो यह है कि तुम उसे जितना ज्यादा प्रेम करोगे वह उतनी ही रहस्यमय मालूम पड़ेगी। कारण यह है कि तुम उसे जितना ज्यादा प्रेम करोगे। तुम उतने ही अधिक गहरे उसमे प्रवेश करोगे। और तुम्हें मालूम पड़ेगा कि वह कितनी नदी जैसी प्रवाहमान है, परिवर्तनशील है, जीवंत है और प्रति पल नई और भिन्न है।

अगर तुम गहरे नहीं देखते हो, अगर तुम इसी तल से बंधे हो कि वह तुम्हारी पत्नी है, कि उसका यह नाम है, तो तुमने एक हिस्से को पकड़ लिया है, और उस हिस्से को तुम अपनी पत्नी की भांति देखते रहते हो। और तब

जब भी तुम्हारी पत्नी में कुछ बदलाहट होगी, वह उस बदलाहट को तुमसे छिपायेगी। जब वह प्रेमपूर्ण नहीं होगी तब भी तुमसे प्रेम का अभिनय करेगी, क्योंकि तुम्हें उससे प्रेम की अपेक्षा है। और तब उसके कुछ नकली और झूठ रूप तुम्हारे सामने होंगे। क्योंकि उसे बदलने कि इजाजत नहीं है। उसे स्वयं होने की इजाजत नहीं है। कुछ ऊपर से लादा जा रहा है और तब सारा संबंध मुर्दा हो जाता है।

तुम जितना ही प्रेम करोगे, उतना ही परिवर्तन का पहलू दिखाई देगा। तब तुम प्रत्येक क्षण अजनबी हो; जब तुम भविष्यवाणी नहीं कर सकते कि तुम्हारा पति कल सुबह कैसे भविष्यवाणी कर सकती है। भविष्यवाणी तो तभी हो सकती है। यदि तुम्हारा पति मुर्दा हो; तब तुम भविष्यवाणी कर सकती है। केवल वस्तुओं के संबंध में भविष्यवाणी हो सकती है। व्यक्तियों के संबंध में भविष्यवाणी नहीं हो सकती। अगर किसी व्यक्ति के संबंध में भविष्यवाणी की जा सके तो जान लो कि वह मुर्दा है, वह मर चुका है। उसका जीवित होना झूठ है। इसीलिए उसके बारे में भविष्यवाणी हो सकती है। व्यक्तियों के संबंध में कोई भविष्यवाणी नहीं हो सकती है। क्योंकि बदलाहट संभव है।

अपने मित्र को अजनबी की भांति देखो; वह अजनबी ही है। और डरों मत। हम अजनबी से डरते है; इसलिए हम भूल जाते है। कि मित्र भी अजनबी है। अगर तुम अपने मित्र में भी अजनबी को देख सको तो तुम्हें कभी निराशा नहीं होगी। क्योंकि अजनबी से तुम अपेक्षा नहीं होती है। मित्र के संबंध में तुम सदा निश्चित होते है। तुम उससे जो कुछ चाहोगे। वह नहीं होता है। इससे ही अपेक्षा पैदा होती है। और निराशा हाथ लगती है। क्योंकि कोई व्यक्ति तुम्हारी अपेक्षाओं को नहीं पूरा कर सकता है। कोई यहां तुम्हारी अपेक्षाएं पूरी करने के लिए नहीं है। सब यहां अपने अपेक्षाएं पूरी करने के लिए है। कोई तुम्हारी अपेक्षाएं पूरी करने के लिए नहीं है। लेकिन तुम्हें अपेक्षा है कि दूसरे तुम्हारी अपेक्षाएं पूरी करें। और दूसरों को अपेक्षा है कि तुम उनकी अपेक्षाएं पूरी करो। और तब कलह है, संघर्ष है, हिंसा है

और दुःख है।

अपने मित्र को अजनबी की भांति देखो; वह अजनबी ही है। और डरों मत। हम अजनबी से डरते है; इसलिए हम भूल जाते है कि मित्र भी अजनबी है। अगर तुम अपने मित्र में भी अजनबी को देख सको तो तुम्हें कभी निराशा नहीं होगी। क्योंकि अजनबी से तुम्हें अपेक्षा नहीं होती है। मित्र के संबंध में तुम सदा निश्चित होते हो कि तुम उससे जो कुछ चाहोगे वह पूरा करेगा; इससे ही अपेक्षा पैदा होती है। और निराशा हाथ लगती है। क्योंकि कोई व्यक्ति तुम्हारी अपेक्षाओं को नहीं पूरा कर सकता है। कोई यहां तुम्हारी अपेक्षाएं पूरी करने के लिए नहीं है। सब यहां अपनी अपेक्षा है। कि दूसरे तुम्हारी अपेक्षाएं पूरी करें,और दूसरों को अपेक्षा है कि तुम उनकी अपेक्षाएं पूरी करो। और कब कलह है, संघर्ष हिंसा है और दूःख है।

अजनबी को सदा स्मरण रखो। मत भूलों कि तुम्हारा घनिष्ठ मित्र भी अजनबी है। दूर से भी दूर है। अगर यह भाव, यह ज्ञान घटित हो जाए, तो फिर तुम अजनबी में भी मित्र को देख सकते हो। यदि मित्र अजनबी हो सकता है तो अजनबी भी मित्र हो सकता है।

किसी अजनबी को देखो; उसे तुम्हारी भाषा नहीं आती है। वह तुम्हारे देश का नहीं है। तुम्हारे धर्म का नहीं है। तुम्हारे रंग का नहीं है। तुम गोरे हो और वह काला है। या तुम काले हो और वह गोरा है। भाषा के जरिए तुम्हारे और उसके बीच कोई संवाद संभव नहीं है। तुम्हारे और उसके पूजा स्थल भी एक नहीं है। राष्ट्र, धर्म, जाति, वर्ण, रंग—कहीं भी कोई समान भूमि नहीं है। वह बिलकुल अजनबी है। लेकिन उसकी आंखों में झांको, वहां एक ही मनुष्यता मिलेगी। वह समान भूमि है। उसके भीतर वहीं जीवन है जो तुममें है; वह समान भूमि है। और

अस्तित्व भी वहीं है; वह तुम दोनों के मित्र होने का आधार है। तुम उसकी भाषा भले हीन समझो, लेकिन उसको तो समझ सकते हो। मौन से भी संवाद घटित होता है। उसकी आँखो में गहरे, झांकने भर से प्रकट हो सकता है।

और अगर तुम गहरे देखना जान लो तो शत्रु भी तुम्हें धोखा नहीं दे सकता; तुम उसके भीतर मित्र को देख लोगे। वह यह नहीं सिद्ध कर सता कि वह तुम्हारा मित्र नहीं है। वह तुमसे कितना ही दूर हो, तुम्हारे पास ही है; क्योंकि तुम उसी अस्तित्व की धारा में हो, उसी नदी में हो, जिसमे वह है। तुम दोनों अस्तित्व के तल पर एक ही जमीन पर खड़े हो।

और अगर वह भाव प्रगाढ़ हो तो एक वृक्ष भी तुमसे बहुत दूर नहीं है। तब एक पत्थर भी बहुत अगल नहीं है। एक पत्थर कितना अजनबी है। उसके साथ तुम्हारा कोई तालमेल नहीं है; उसके साथ संवाद की कोई संभावना नहीं है। लेकिन वहां भी वही अस्तित्व है; पत्थर का भी अस्तित्व है, वह भी अस्तित्व का अंश है। वह भी होने के जगत में भागीदार है। वह है। उसमें भी जीवन है। वह भी स्थान घेरता है; वह भी समय में जीता है। सूरज उसके लिए भी उगता है। जैसे तुम्हारे लिए उगता है। एक दिन वह नहीं था। जैसे तुम नहीं थे। और एक दिन जैसे तुम मर जाओगे। वह भी मर जाएगा। पत्थर भी एक दिन विदा

हो जाएगा।

अस्तित्व में हम मिलते है; यह मिलन ही मित्रता है। व्यक्तित्व में हम भिन्न है, अभिव्यक्ति में हम भिन्न है; लेकिन तत्वतः हम एक ही है। अभिव्यक्ति में रूप में हम अजनबी है; उस तल पर हम एक दूसरे के कितने ही करीब आएं, लेकिन दूर ही रहेंगे। तुम पास-पास बैठ सकते हो, एक दूसरे को आलिंगन में ले सकत हो; लेकिन इससे ज्यादा निकट आने की संभावना नहीं है। जहां तक तुम्हारे बदलते व्यक्तित्व का संबंध है, तुम एक नहीं हो सकते हो। तुम कभी समान नहीं हो। तुम सदा भिन्न हो, अजनबी हो। उस तल पर तुम नहीं मिल सकते क्योंकि मिलने के पले ही तुम बदल जाते हो। मिलन की कोई संभावना नहीं है। जहां तक शरीर का संबंध है, मन का संबंध है, मिलन संभव नहीं है। क्योंकि इसके पहले कि तुम मिलो तुम वही नहीं रहते।

क्या तुमने कभी ख्याल किया है। तुम्हें किसी के प्रति प्रेम उमगता है। गहन प्रेम तुम उस प्रेम से भर जाते हो; लेकिन जैसे ही तुम जाते हो और कहते हो कि मैं तुम्हें प्रेम करता हूं, वह प्रेम विलीन हो जाता है। क्या तुमने निरीक्षण किया है कि वह प्रेम अब नहीं रहा, उसकी स्मृति भर शेष है। अभी वह था और अभी वह नहीं है। तुमने उसे अभिव्यक्त किया, उसे प्रकट किया; यही तथ्य उसे परिवर्तन के जगत में ले आया। जब उसकी प्रतीति हुई थी, हो सकता है वह प्रेम तुम्हारे प्राणों का हिस्सा रहा हो; लेकिन जब तुम उसे अभिव्यक्त करते हो तो तुम उसे समय और परिवर्तन के जगत में ले आते है; अब वह सरित प्रवाह में प्रविष्ट हो रहा है। जब तुम कहते हो कि मैं तुम्हें करता हूं, तब तक शायद वह बिलकुल ही गायब हो चुका हो। यह बहुत कठिन है; लेकिन अगर तुम निरीक्षण करोगे तो यह तथ्य बन जाएगा।

तब तुम देख सकते हो कि मित्र में अजनबी है और अजनबी ने मित्र है। और तब तुम 'असमानता के बीच समभाव' रख सकते हो। परिधि पर तुम बदलते रहते हो, लेकिन केंद्र पर, प्राणों में वही बन रहते हो।

'मान और अपमान में......।'

कौन सम्मानित होता है। और कौन अपमानित होता है? तुम? कभी नहीं। जो सतत बदल रहा है और जो तुम नहीं हो, सिर्फ वहीं मान अपमान अनुभव करता है। कोई तुम्हारा सम्मान करता है। और अगर तुमने समझा कि

यह व्यक्ति मेरा सम्मान कर रहा है। तो तुम कठिनाई में पड़ोगे। वह तुम्हें नहीं, तुम्हारी किसी खास अभिव्यक्ति को, किसी रूप विशेष को सम्मानित कर रहा है। वह तुम्हें कैसे जान सकता है? तुम स्वयं अपने को नहीं जानते हो। वह तुम्हारे सतत बदलते व्यक्तित्व के किसी रूप विशेष का सम्मान कर रहा हूं; वह तुम्हारी किसी अभिव्यक्ति का सम्मान कर रहा है। तुम दयावान हो, प्रेमपूर्ण हो; वह उसका सम्मान कर रहा है। लेकिन वह दया, वह प्रेम परिधि पर है। अगले क्षण तुम घृणा से भर सकते हो। हो सकता है फूल न रहें; कांटे ही कांटे हों। तुम इतने प्रसन्नन रहो; उदास और दुःखी होओ। तुम कठोर हो सकते हो, क्रोध में हो सकते हो। तब वह तुम्हारा अपमान करेगा। और हो सकता है। और दूसरे दिन साधु कर सकते है। आज वे तुम्हें महात्मा कह सकते है। और कल वे तुम्हारे खिलाफ हो सकते हो। तुम्हें पत्थर मार सकते है।

यह क्या है? वे तुम्हारी परिधि से परिचित होते है। वे कभी तुमसे परिचित नहीं होते। यह स्मरण रहे कि जो कुछ भी कह रहे है। वह तुम्हारे संबंध में नहीं है। तुम बाहर छूट जाते हो; तुम परे रह जाते हो। उसकी निंदा, उसकी प्रशंसा,वह जो भी करते है, उसका तुम्हारे साथ कोई भी संबंध नहीं है।

गांव में एक लड़की गर्भवती हो गई। उसने अपने मां बाप से कहा कि उसके गर्भ के लिए यह साधु ही जिम्मेदार है। और सारा गांव उसके खिलाफ उठ खड़ा हुआ। लोग आए और उन्होंने उसके झोंपड़े में आग लगा दी। सुबह का समय था। और बड़ी सर्द सुबह थी—जाड़े की सुबह। उन्होंने नवजात शिशु को उस भिक्षु के ऊपर फेंक दिया। और लड़की के पिता ने भिक्षु से कहा: 'यह तुम्हारा बच्चा है; इसे सम्हालो।' भिक्षु ने इतना ही कहा: 'ऐसा है क्या?' और तभी बच्चा रोने लगा। तो भिक्षु भीड़ को भूल कर,बच्चे को सम्हालने लगा।

भीड़ भिक्षु के झोंपड़े को जलाकर वापस लौट गई। इधर बच्चे को भूख लगी, लेकिन भिक्षु के पास दूध खरीदने के पैसे नही थे। तो वह नगर में बच्चे के लिए भीख मांगने गया। लेकिन अब उसे कौन भीख देता? वह जहां भी गया, लोगों ने अपने घरों के दरवाजे बंद कर लिए। सब जगह उसे निंदा और गालियां ही मिली।

आखिर में भिक्षु उसी घर के सामने पहुंचा जो उस बच्चे की मां का घर था। वह लड़की बहुत संताप में थी। तभी उसे बच्चे के रोने की आवाज सुनाई दी। वह द्वार पर खड़ा भिक्षु कह रहा था। 'मुझे मत दो, मैं पापी हूं, लेकिन यह बच्चा तो पापी नहीं है। इसके लिए थोड़ा दूध दे दरो।' तब उस लड़की से नहीं रहा गया। उसने कबूल कर लिया कि बच्चे के असली पिता को छिपाने के लिए उसने इस भिक्षु का नाम लिया था। वह बिलकुल बेकसूर है।

अब पूरा नगर फिर साधु के पास जमा हो गया। लोग उसके पैरों में गिरकर क्षमा मांगने लगे। और लड़की के पिता ने आकर भिक्षु से बच्चे को वापस ले लिया और आंसुओं से भरी आंखों से कहा: 'ऐसा है क्या? आपने सुबह ही इनकार क्यों नही किया? कि यह बच्चा आपका नहीं है। भिक्षु ने केवल इतना ही कहा कि ऐसा है क्या?'

अगर तुम अनासक्त रहने का प्रयत्न करते हो तो तुम परिधि पर ही हो; तुम्हें अभी केंद्र का कुछ पता नहीं है। केंद्र अनासक्त है। वह सदा अनासक्त है। वह पार है; वह सदा अस्पर्शित है। नीचे कुछ भी घटे, यह केंद्र सदा अनछुआ ही रहता है। सदा कुंवारा ही रहता है।

तो परस्पर विरोधी स्थितियों में इस विधि का प्रयोग करो; और अपने भीतर उसे अनुभव करते चलो जो सदा समान है। जब कोई तुम्हारा अपमान करे तो अपने ध्यान को उस बिंदू पर ले जाओ जहां तुम सिर्फ उस आदमी को सुन रहे हो, बिना किसी प्रतिक्रिया के बस सुन रहे हो। यह अपमान की स्थिति है। फिर कोई तुम्हारा सम्मान कर रहा है। उसे भी सुनो, सिर्फ सुनो। निंदा-प्रशंसा, मान-अपमान, सब में सिर्फ सुनो। तुम्हारी परिधि बेचैन होगी,

उसे भी देखो। केवल देख बदलने की कोशिश मत करो। उसे देखो, और स्वयं केंद्र से जुड़े रहो। तब तुम्हें वह अनासक्ति उपलब्ध होगी जो आरोपित नहीं है। जो सहज है, स्वाभाविक है।

और एक बार तुमने इस सहज अनासक्ति की प्रतीति हो जाए तो फिर कुछ भी तुम्हें बेचैन नहीं कर सकेगा। तुम शांत बने रहोगे। संसार में कुछ भी होगा तुम अकंप बने रहोगे। तब कोई तुम्हारी हत्या भी करेगा तो सिर्फ शरीर ही स्पर्श करेगा। तुम अस्पर्शित रहोगे। तुम सबके पार रहोगे। और यह पार रहना ही तुम्हें अस्तित्व में प्रवेश देगा। वह पार रहना ही तुम्हें आनंद से, शाश्वत से, सत्य में प्रतिष्ठित करेगा।

शंकर कहते है कि मैं उस व्यक्ति को संन्यासी कहता हूं, जो जानता है कि क्या अनित्य है और क्या नित्य है। क्या चलायमान है और क्या अचल है। भारतीय दर्शन इसे ही विवेक कहता है। परिवर्तन और सनातन की पहचान ही विवेक है, बोध है।

तुम जो कुछ भी कर रहे हो, उसमे इस सूत्र का प्रयोग बड़ी गहराई के साथ और बड़ी सरलता के साथ किया जा सकता है। तुम्हें भूख लगी है; इसमे दोनों स्थितियों को स्मरण रखो। भूख की प्रतीति परिधि को होती है। क्योंकि परिधि को ही भोजन की जरूरत है। ईंधन की जरूरत है। तुम्हें भोजन की कोई जरूरत नहीं है; तुम्हें ईंधन की कोई जरूरत नहीं है। यह शरीर की जरूरत है।

स्मरण रहे, जब भी भूख लगती है। शरीर को लगती है। तुम बस उसके जानने वाल हो। अगर तुम नहीं होते तो भूख नहीं जानी जा सकती है। और अगर शरीर नहीं होता तो भूख नहीं होती। शरीर को भूख तो लग सकती है, लेकिन उसे उसका ज्ञान नहीं हो सकता है। और तुम जानते तो हो, लेकिन तुम्हें भूख नहीं लगती।

तो कभी मत कहो कि मुझे भूख लगी है। सदा यही कहो,और महसूस करने का प्रयास करो की किसे भूख लगी है। उपवास की विधि ध्यानी के यही स्थिति उत्पन्न करता है। की मेरा शरीर भूखा है। अपने जानने पर जोर दो। यह विवेक है। तुम बूढ़े हो, कभी मत कहो कि मैं बूढ़ा हूं, इतना ही कहो कि यह शरीर बूढा हो गया है। और तब मृत्यु के क्षण में तुम जान सकोगे की मैं नहीं मर रहा। यह शरीर मर रहा है। मैं केवल शरीर बदल रहा हूं। घर बदल रहा हूं। और अगर यह विवेक प्रगाढ़ हो तो किसी दिन अचानक बुद्धत्व घटित हो जाएगा।
ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र, भाग-तीन

प्रवचन-41

विज्ञान भैरव तंत्र विधि—67 (ओशो)

'यह जगत परिवर्तन का है, परिवर्तन ही परिवर्तन का। परिवर्तन के द्वारा परिवर्तन को विसर्जित करो।'

परिवर्तन के द्वारा परिवर्तन को विसर्जित करो–शिव

पहली बात तो यह समझने की है कि तुम जो भी जानते हो वह परिवर्तन है, तुम्हारे अतिरिक्त जानने वाले के अतिरिक्त सब कुछ परिवर्तन है। क्या तुमने कोई ऐसी चीज देखी है। जो परिवर्तन न हो। जो परिवर्तन के अधीन न हो। यह सारा संसार परिवर्तन की घटना है।

हिमालय भी बदल रहा है। हिमालय का अध्यन करने वाले वैज्ञानिक कहते है कि हिमालय बढ़ रहा है। बड़ा हो रहा है। हिमालय संसार का सबसे कम उम्र का पर्वत है। वह अभी बच्चा है और बढ़ रहा है। वह अभी प्रौढ़ नहीं हुआ है। वह अभी उस अवस्था को नहीं प्राप्त हुआ है। जहां पहूंच कर ह्रास या गिरावट शुरू होती है। हिमालय बच्चे जैसा है। विंध्याचल संसार के सबसे पुराने पर्वतों में हैं। कुछ तो उसे दुनियां का सबसे पुराना पर्वत मानते है। सदियों से वह अपने बुढ़ापे के कारण क्षीण हो रहा है। मर रहा है।
तो इतना स्थिर और अडिग और दृढ़ मालूम पड़ने वाला हिमालय भी बदल रहा है। वह बस पत्थरों कीं नदी जैसा नहीं है। पत्थर होने से कोई फर्क नहीं पड़ता। पत्थर भी प्रवाहमान है, बह रहा है। तुलनात्मक दृष्टि से सब कुछ बदल रहा है। लेकिन ऐसा सापेक्षत: है।

कोई भी चीज, जिसे तुम जान सकते हो बदलाहट के बिना नहीं है। मेरी बात खयाल में रहे। जिसे तुम जानते हो वह वस्तु नित्य बदल रही है। जाननेवाले के अतिरिक्त कुछ भी नित्य नहीं है। शाश्वत नही है। लेकिन जानने वाला सदा पीछे है। वह सदा जानता है; वह कभी जाना नहीं जाता। वह कभी आब्जेक्ट्स नहीं बन सकता; वह सदा सब्जैक्ट ही रहता है। तुम जो कुछ भी करते हो या जानते हो, जाननेवाला सदा उससे पीछे है। तुम उसे नहीं जान सकते हो।

और जब मैं कहता हूं कि तुम जाननेवाले को नहीं जान सकते, तो इससे परेशान मत होओ। जब मैं कहता हूं कि तुम उसे नहीं जान सकते हो तो उसका मतलब है कि तुम उसे विषय की तरह नहीं जान सकते हो। मैं तुम्हें देखता हूं , लेकिन मैं उसी तरह अपने को कैसे देख सकता हूं। यह असंभव है। क्योंकि ज्ञान के लिए दो चीजें जरूरी है। ज्ञाता और ज्ञेय। तो जब मैं तुम्हें देखता हूं तो तुम ज्ञेय हो और मैं ज्ञाता हूं। और दोनों के बीच ज्ञान सेतु की तरह है। लेकिन ज्ञान का यह सेतु कहां बनेगा। जब मैं अपने को ही देखता हूं। जब मैं अपने को ही जानने की कोशिश करता हूं। वहां तो केवल मैं ही हूं, पूरी तरह अकेला मैं हूं। दूसरा किनारा बिलकुल अनुपस्थित है। फिर सेतु कहां निर्मित किया जाए? स्वयं को जाना कैसे जाएं?

तो आत्मज्ञान एक नेति-नेति प्रक्रिया है। तुम अपने को सीधे-सीधे नहीं जान सकते; तुम सिर्फ ज्ञान के विषयों को हटाते जा सकते हो। ज्ञान के विषयों को एक-एक करके छोड़ते चले जाओ। और जब ज्ञान का कोई विषय न रह

जाए, जब जानने को कुछ भी न रह जाए। सिर्फ एक शून्य, एक खाली पन रह जाए—और यही ध्यान है। ज्ञान के विषयों को छोड़ते जाना—तब एक क्षण आता है जब चेतना तो है लेकिन जानने के लिए कुछ नहीं है। जानना तो है, लेकिन जानने को कुछ नहीं बचता है। तब जानने की सहज-शुद्ध ऊर्जा रहती है। लेकिन जानने को कुछ नहीं बचता है। कोई विषय नहीं रहता है। उस अवस्था में जब जानने को कुछ नहीं रहता, तुम एक अर्थों में स्वयं को जानते हो। अपने को जानते हो।

लेकिन यह ज्ञान अन्य सब ज्ञान से सर्वथा भिन्न है। दोनो के लिए एक ही शब्द का उपयोग करना भ्रामक है। इसीलिए अनेक रहस्यवादियों ने कहा है कि आत्मज्ञान शब्द विरोधाभासी है। ज्ञान सदा दूसरे को होता है। अंत: आत्म ज्ञान संभव नहीं है। जब दूसरा नहीं होता है तो कुछ होता है, तुम उसे आत्म ज्ञान कह सकते हो। लेकिन यह शब्द भ्रामक है।

तो तुम जो भी जानते हो वह परिवर्तन है। ये जो दीवारें है, ये भी निरंतर बदल रही है। और भौतिक शास्त्र भी इसका समर्थन करता है। जो दीवार है, ये स्थाई मालूम पड़ती है। ठहरी हुई लगती है। वह भी प्रति पल बदल रही है। एक-एक परमाणु बह रहा है। प्रत्येक चीज बह रही है। लेकिन उसकी गति इतनी तीव्र है कि उसका पता नहीं चलता है। दोपहर भी वह ऐसे लगती थी श्याम भी ऐसे लगती है।

यह सूत्र कहता है कि सभी चीजें बदल रही है। 'यह जगत परिवर्तन का है.....।'

इस सूत्र पर ही बुद्ध का समस्त दर्शन खड़ा है। बुद्ध कहते है कि प्रत्येक चीज बहाव है, बदल रही है। क्षणभंगुर है। और यह बात प्रत्येक व्यक्ति को जान लेना चाहिए। बुद्ध का सारा जोर इसी एक बात पर है; उनकी पूरी दृष्टि इसी बात पर आधारित है।

तुम्हें एक चेहरा दिखाई देता है, बहुत सुंदर है। और जब तुम सुंदर रूप को देखते हो तो भाव होता है कि यह रूप सदा ही ऐसा रहेगा। इस बात को ठीक से समझ लो ऐसी अपेक्षा कभी मत करो। और अगर तुम जानते हो कि यह रूप तेजी से बदल रहा है, कि यह इस क्षण सुंदर है और अगले क्षण कुरूप हो जायेगा। तो फिर आसक्ति कैसे पैदा होगी? असंभव है। एक शरीर को देखो,वह जीवित है; अगले क्षण वह मृत हो सकता है। अगर तुम परिवर्तन को समझो तो सब व्यर्थ है।

बुद्ध ने अपना महल छोड़ दिया, परिवार छोड़ दिया। सुंदर पत्नी छोड़ दी, प्यारा पुत्र छोड़ दिया। और जब किसी ने पूछा कि क्यों छोड़ रहे हो, तो उन्होंने कहां: 'जहां कुछ भी स्थाई नहीं है,वहां रहने का क्या प्रयोजन? बच्चा एक न एक दिन मर जायेगा।' और बच्चे का जन्म उसी रात हुआ था। उसके जन्म के कुछ घंटे बाद ही उन्होंने उसे अंतिम बार देखा। अपनी पत्नी के कमरे में गये। पत्नी की पीठ दरवाजे की और थी और वह बच्चे को अपनी बांहों में लिए सो रही थी। बुद्ध ने अलविदा कहना चाहा। लेकिन वे झिझके। उन्होंने कहा: 'एक क्षण उनके मन में यह विचार कौंधा कि बच्चे के जन्म के कुछ घंटे ही हुए है। मैं उसे अंतिम बार देख हूं। तब उनके मन ने कहां, क्या प्रयोजन है, सब तो बदल रहा है। आज बच्चा पैदा हुआ है। कल मर जायेगा। एक दिन पहले यह नहीं था, अभी वह है। और एक दिन फिर नहीं रहेगा। तो क्या प्रयोजन है सब बदल रहा है।' वे मुड़े और विदा हो गये।

जब किसी ने पूछा कि आपने क्यों सब कुछ छोड़ दिया? मैं अपनी खोज में हूं। जो कभी नहीं बदलता,जो शाश्वत है। यदि मैं परिवर्तनशील के साथ अटका रहूंगा। तो निराशा ही हाथ आयेगी। क्षण भंगुर से आसक्त होना मूढ़ता

है। वह कभी ठहरने वाला नहीं है। मैं मूढ़ नहीं हूं। मैं तो उसकी खोज कर रहा हूं जो कभी नहीं बदलता, जो नित्य है। अगर कुछ शाश्वत है तो ही जीवन में अर्थ है, जीवन में मूल्य है। अन्यथा सब व्यर्थ है।

यह सूत्र सुंदर है। यह सूत्र कहता है। 'परिवर्तन के द्वारा परिवर्तन को विसर्जित करो।''

बुद्ध कभी दूसरा हिस्सा नहीं कहते। यह दूसरा हिस्सा बुनियादी रूप से तंत्र से आया है। बुद्ध इतना ही कहेंगे। कि सब कुछ परिवर्तनशील है। इसे अनुभव करो। और तुम्हें आसक्ति नहीं होगी। और जब आसक्ति नहीं होगी तो धीरे-धीरे अनित्य को छोड़ते-छोड़ते तुम अपने केंद्र पर पहुंच जाओगे। जो नित्य है। शाश्वत है। परिवर्तन को छोड़ते जाओ और तुम अपरिवर्तन पर केंद्र पर, चक्र के केंद्र पर पहुंच जाओगे।

इस लिए बुद्ध ने चक्र को अपने धर्म का प्रतीक बनाया है। क्योंकि चक्र चलता रहता है। लेकिन उसकी धुरी, जिसके सहारे चक्र चलता है, ठहरी रहती है। स्थाई है। तो संसार चक्र की भांति चलता रहता है। तुम्हारा व्यक्तितत्व चक्र की भांति बदलता रहता है। धुरी अचल रहती है।

तंत्र कहता है कि जो परिवर्तनशील है उसे छोड़ो मत, उसमे उतरो, उसमें जाओ। उससे आसक्त मत होओ। लेकिन उसमें जीओं। उससे डरना क्या है? उसे घटित होने दो। और तुम उसमें गति कर जाओ। उसे उसके द्वारा ही विसर्जित करो। डरों मत; भागों मत। भागकर कहां जाओगे। इससे बचोगे कैसे? सब जगह तो परिवर्तन है। तंत्र कहता है,बदलाहट ही मिलेगी। सब भागना व्यर्थ है। भागने की कोशिश ही मत करो। तब करना क्या है?

आसक्ति मत निर्मित करो। तुम परिवर्तन हो जाओ। उसके साथ कोई संघर्ष मत खड़ा करो। उसके साथ बहो। नदी बह रही हे। उसके साथ बहो। तेरो भी मत। नदी को ही तुम्हें ले जाने दो। उसके साथ लड़ों मत; उससे लड़ने से तुम्हारी शक्ति बरबाद होगी। और जो होता है, उसे होने दो। नदी के साथ बहो।

इससे क्या होगा? अगर तुम नदी के साथ बिना संघर्ष किए बह सके; बिना किसी शर्त के बह सके, अगर नदी की दिशा ही तुम्हारी दिशा हो जाए, तो तुम्हें अचानक यह बोध होगा कि मैं नदी नहीं हूं, तुम्हें यह बोध होगा कि मैं नदी नहीं हूं, इसे अनुभव करो; किसी दिन नदी में उतर कर इसका प्रयोग करो। नदी में उतरो, विश्राम पूर्ण रहो और अपने को नदी के हाथों में छोड़ दो। उसे तुम्हें बहा ले जाने दो। लड़ों मत, नदी के साथ एक हो जाओ। तब अचानक तुम्हें अनुभव होगा कि चारों तरफ नदी है, लेकिन मै नदी नहीं हूं।

यदि नदी में लड़ोगे तो तुम यह बात भूल जा सकते हो। इसीलिए तंत्र कहता है: 'परिवर्तन से परिवर्तन को विसर्जित करो।' लड़ो मत, लड़ने की कोई जरूरत नहीं है। क्योंकि परिवर्तन तुममें नहीं प्रवेश कर सकता है। डरो नहीं; संसार में रहो। डरो मत;क्योंकि संसार तुममें प्रवेश नहीं कर सकता है। उसे जीओं। कोई चुनाव मत करो।

दो तरह के लोग है। एक वे जो परिवर्तन के जगत से चिपके रहते है। और एक वे है जो उससे भाग जाते है। लेकिन तंत्र कहता है कि जगत परिवर्तन है, इसलिए उससे चिपकना नहीं है। दोनों व्यर्थ है। इससे भागने को। वह बदल ही रहा है। तुम नहीं थे तब यह बदल रहा था। तुम नहीं रहोगे तब भी यह बदलता रहेगा। फिर इसके लिए इतना शोर गूल क्यो?

'परिवर्तन को परिवर्तन से विसर्जित करो।'

यह एक बहुत गहन संदेश है। क्रोध को क्रोध से विसर्जित करो; काम को काम से विसर्जित करो; लोभ को लोभ से विसर्जित करो, संसार को संसार से विसर्जित करो। उससे संघर्ष मत करो, विश्रामपूर्ण रहो। क्योंकि संघर्ष से तनाव पैदा होता है; तनाव से चिंता और संताप पैदा होता है। विश्रामपूर्ण रहो। तुम नाहक उपद्रव में पड़ोगे। संसार जैसा है उसे वैसा ही रहने दो।

दो तरह के लोग है जो संसार को वैसा ही नहीं रहने देना चाहते जैसा वह है। वे क्रांतिकारी कहलाते है। वे उसे बदलेंगे ही; वे उसे बदलने के लिए जद्दोजहद करेंगे। वे उसे बदलने में अपना सारा जीवन लगा देंगे। और यह जगत अपने आप बदल रहा है। उनकी कोई जरूरत नहीं है। वे अपने को नष्ट करेंगे। दुनिया को बदलने में वे खुद खत्म होंगे। और संसार बदल ही रहा है; इसके लिए किसी क्रांति की जरूरत नहीं है। संसार स्वयं एक क्रांति है; वह बदल ही रहा है।

तुम्हें आश्चर्य होगा। की भारत में महान क्रांतिकारी क्यों नहीं पैदा हुए। यह इसी अंतदृष्टि का परिणाम है कि सब अपने आप ही बदल रहा है। उसके लिए क्रांति की कोई जरूरत नहीं है। तुम उसे बदलने के लिए क्यों परेशान होते हो। तुम न उसे बदल सकते हो और न बदलाहट को रोक सकते हो।

एक तरह का व्यक्तित्व सदा संसार को बदलने की चेष्टा करता है। धर्म की दृष्टि में वह मानसिक तल पर रूग्ण है। सच तो यह है अपने साथ रहने में उसे भय लगता है। इसलिए वह भागता फिरता है। और संसार में उलझा रहता है। राज्य को बदलना है, सरकार को बदलना है; समाज , व्यवस्था, अर्थनीति, सब कुछ को बदलना है। और इसी सब में वि मर जाएगा। और उसे आनंद का, उस समाधि का एक कण भी नहीं उपलब्ध होगा। जिसमें वह जान सकता था कि मैं कौन हूं। और संसार चलता रहेगा। संसार चक्र घूमता रहेगा। संसार चक्र ने अनेक क्रांतिकारी देखे है। और वह घूमता ही जाता है। तुम न तो इसे रोक सकते हो, और न तुम उसकी बदलाहट को तेज ही कर सकते हो।

रहस्यवादियों की, बुद्धों की यह दृष्टि है। वे कहते है कि संसार को बदलने की कोई जरूरत नहीं है। लेकिन बुद्धों की भी दो कोटियां है। कोई कह सता है कि संसार को बदलने की जरूरत नहीं है, लेकिन अपने को बदलने की जरूरत तो है। वह भी परिवर्तन में विश्‍वास करता है। वह जगत को बदलने में नहीं, लेकिन अपने में बदलने में विश्‍वास करता है।

लेकिन तंत्र कहता है। कि किसी को भी बदलने की जरूरत नहीं है—न संसार को और न अपने को। रहस्य का, अध्यात्म का यह गहनत्म तल है। यह उसका अंतरतम केंद्र है। तुम्हें किसी को भी बदलने की जरूरत नहीं है—न संसार को और न अपने को। तुम्हें इतना ही जानना है कि सब कुछ बदल रहा है, और तुम्हें उस बदलाहट के साथ बहाना है, उसे स्वीकार करना है।

और जब बदलने को कोई परिवर्तन नहीं है, तो तुम समग्ररतः: विश्रामपूर्ण हो सकते हो। जब तक प्रयत्न है। तुम विश्रामपूर्ण नहीं हो सकते। तब तक तनाव बना रहेगा। क्योंकि तुम्हें अपेक्षा है कि भविष्य में कुछ होने वाला है, जगत बदलने वाला है। संसार में साम्यवाद आने वाला है। या पृथ्वी पर स्वर्ग उतरने वाला है। या भविष्य में कोई ऊटोपिया आने वाला है। या तुम प्रभु के राज्य में प्रवेश करने वाले हो। स्वर्ग में देवदूत तुम्हारा स्वागत करने के लिए तैयार खड़े है—जो भी हो; तुम भविष्य में कही अटके हो। इस अपेक्षा के साथ तुम तनावपूर्ण रहोगे।

तंत्र कहता है, इन बातों को भूल जाओ। संसार बदल ही रहा है। और तुम भी निरंतर बदल रहे हो। बदलाहट ही अस्तित्व है। इसलिए बदलाहट की चिंता मत करो। तुम्हारे बिना ही बदलाहट हो रही है। तुम्हारी जरूरत नहीं है। तुम भविष्य की कोई चिंता किए बिना उसमे बहो; और तब अचानक तुम्हें अपने भीतर के उस केंद्र का बोध हो गा जो कभी नहीं बदलता है, जो सदा वही का वही रहता है।

ऐसा क्यों होता है? क्योंकि जब तुम विश्रामपूर्ण होते हो तो बदलाहट की पृष्ठभूमि में विपरीत दिखाई पड़ता है। परिवर्तन की पृष्ठभूमि में तुम्हें सनातन का, शाश्वत का बोध होता है। अगर तुम संसार को या अपने को बदलने का प्रयत्न में लगे हो तो तुम अपने भीतर छोटे से अकंप, स्थिर ठहरे हुए केंद्र को नहीं देख पाओगे। तुम बदलाहट में इतने घिरे हो कि तुम उसे नहीं देख पाते हो जो है।

सब तरफ परिवर्तन है। यह परिवर्तन पृष्ठभूमि बन जाता है। कंट्रास्ट बन जाता है। और तुम शिथिल होते हो। विश्राम में होते हो, इसलिए तुम्हारे मन में भविष्य नहीं होता। भविष्य के विचार नहीं होते। तुम यहां और अभी होते हो। यह क्षण ही सब कुछ होता है। सब कुछ बदल रहा है—और अचानक तुम्हें अपने भीतर उस बिंदू का बोध है जो कभी नहीं बदला है।

'परिवर्तन से परिवर्तन को विसर्जित करो।'

इसका अर्थ यही है। लड़ो मत। मृत्यु के द्वारा अमृत को जान लो; मृत्यु के द्वारा मृत्यु को मर जाने दो। उससे लड़ाई मत करो।

तंत्र की दृष्टि को समझना कठिन है। कारण है कि हमारा मन कुछ करना चाहता है। और तंत्र है कुछ न करना। तंत्र कर्म नहीं, पूर्ण विश्राम है। लेकिन यह एक सर्वाधिक गुह्म रहस्य है। और अगर तुम इसे समझ सको। अगर तुम्हें अगर तुम्हें इसकी प्रतीति हो जाए,तो तुम्हें किसी अन्य चीज की चिंता लेने की जरूरत नहीं है। ये अकेली विधि तुम्हें सब कुछ दे सकती है।

तब तुम्हें कुछ करने की जरूरत नही है। क्योंकि तुमने इस रहस्य को जान लिया है जो परिवर्तन से परिवर्तन का अतिक्रमण कर रहा हे। मृत्यु से मृत्यु का अतिक्रमण हो सकता है। काम से काम का अतिक्रमण हो सकता है। क्रोध से क्रोध का अतिक्रमण हो सकता है। अब तुम्हें यह कुंजी मिल गई है कि जहर से जहर का अतिक्रमण हो सकता है।

ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र, भाग-तीन

प्रवचन-43

विज्ञान भैरव तंत्र विधि—68 (ओशो)

जैसे मुर्गी अपने बच्चों का पालन-पोषण करती है, वैसे ही यथार्थ में विशेष ज्ञान और विशेष कृत्य का पालन-पोषण करो।

विशेष ज्ञान और विशेष कृत्य का पालन-पोषण करो।—शिव

इस विधि में मूलभूत बात है: 'यथार्थ में।' तुम भी बहुत चीजों का पालन पोषण करते हो; लेकिन सपने में, सत्य में नहीं। तुम भी बहुत कुछ करते हो; लेकिन सपने में सत्य में नहीं। सपनों को पोषण देना छोड़ दो। सपनों को बढ़ने में सहयोग मत दो। सपनों को अपनी ऊर्जा मत दो। सभी सपनों से अपने को पृथक कर लो।

यह कठिन होगा, क्योंकि सपनों में तुम्हारे न्यस्त स्वार्थ है। अगर तुम अपने को अचानक सपनों से बिलकुल अलग कर लोगे तो तुम्हें लगेगा कि मैं डूब रहा हूं, मैं मर रहा हूं। क्योंकि तुम हमेशा स्थगित सपनों में रहते आए हो। तुम कभी यहां और अभी नहीं रहे; तुम सदा कहीं और रहते आए हो। तुम आशा करते रहे हो।
क्या तुमने पंडोरा का डब्बा यूनानी कहानी सुनी है। किसी आदमी ने बदला लेने के लिए पंडोरा के पास एक डब्बा भेजा। इस डब्बे में से सब रोग बंद थे जो अभी मनुष्य जाति के बीच फैले है। वे रोग उसके पहले नहीं थे; जब वह डब्बा खुला तो सभी रोग बाहर निकल आए। पंडोरा रोगों को देखकर डर गई ओर उसने डब्बा बंद कर दिया। केवल एक रोग रह गया। ओर वह थी आशा। अन्यथा आदमी समाप्त हो गया होता; ये सारे रोग उसे मार डालते, लेकिन आशा के कारण वह जीवित रहा।

तुम क्यों जी रहे हो? क्या तुमने कभी यह प्रश्न पूछा है? यहां और अभी जीने के लिए कुछ भी नहीं है। सिर्फ आशा है। तुम भी पंडोरा का डब्बा ढो रहे हो। ठीक अभी तुम क्यों जीवित हो? हरेक सुबह तुम क्यों बिस्तर से उठ रहे हो। क्यों तुम रोज-रोज फिर वही करते हो जो कल किया था? यह पुनरूक्ति क्यों? कारण क्या है?

मनुष्य आशा में जीता है। लेकिन यह जीवन नहीं है। अपने को ढोए चला जाता है। जब तक तुम यहां और अभी नहीं जीते हो, तुम जीवन नहीं हो। तुम एक मृत बोझ हो। और वह कल तो कभी आने वाला नहीं है। जब तुम्हारी सब आशाएं पूरी हो जाएंगी। और जब मृत्यु आएगी तो तुम्हें पता चलेगा कि अब कोई कल नहीं है, और अब स्थगित करने का भी उपाय नहीं है। तब तुम्हारा भ्रम टूटेगा; तब तुम्हें लगेगा कि यह धोखा था। लेकिन किसी दूसरे ने तुम्हें धोखा नहीं दिया। अपनी दुर्गति के लिए तुम स्वयं जिम्मेदार हो।

इस क्षण में, वर्तमान में जीने की चेष्टा करो और आशाएं मत पालो—चाहे वे किसी भी ढंग की हों। वे लौकिक हो सकती है, पारलौकिक हो सकती है। इससे कुछ फर्क नहीं पड़ता है। वे धार्मिक हो सकती है। किसी भविष्य

में,किसी दूसरे लोक में, स्वर्ग में, मृत्यु के बाद, निर्वाण में; लेकिन इससे कोई फर्क नही पड़ता। तुम कोई आशा मत करो। यदि तुम्हें थोड़ी निराशा भी अनुभव हो, तो भी यही रहो। यहां और इसी क्षण से मत हटो। हटो ही मत। दुःख सह लो, लेकिन आशा को मत प्रवेश करने दो। आशा के द्वारा स्वप्न प्रवेश करते है। निराशा रहो। अगर जीवन में निराशा है तो निराशा रहो। निराशा को स्वीकार करो। लेकिन भविष्य में होनेवाली किसी घटना का सहारा मत लो।

और तब अचानक बदलाहट होगी। जब तुम वर्तमान में ठहर जाते हो तो सपने भी ठहर जाते है। तब वे नहीं उठ सकते, क्योंकि उनका स्त्रोत ही बद हो जाता है। सपने उठते है। क्योंकि तुम उन्हें सहयोग देते हो। तुम उन्हें पोषण देते हो। सहयोग मत दो; पोषण मत दो।

यह सूत्र कहता है: 'विशेष ज्ञान का पालन-पोषण करो।'

विशेष ज्ञान क्या है? तुम भी पोषण देते हो; लेकिन तुम विशेष सिद्धांतों को पोषण देते हो। ज्ञान को नहीं। तुम विशेष शास्त्रों को पोषण देते हो, ज्ञान को नहीं। तुम विशेष मतवादों को, दर्शन शास्त्रों को, विचार-पद्धतियों को पोषण देते हो। लेकिन विशेष ज्ञान को कभी पोषण नहीं देते। यह सूत्र कहता है कि उन्हें हटाओं, दूर करो, शास्त्र और सिद्धांत किसी काम के नहीं है। अपना अनुभवप्राप्त करो जो प्रामाणिक हो; अपना ही ज्ञान हासिल करो, और उसे पोषण दो। कितना भी छोटा हो, प्रामाणिक अनुभव असली बात है। तुम उस पर अपने जीवन को आधार रख सकते हो। वे जैसे भी हो, जो भी हो। सदा प्रामाणिक अनुभवों की चिंता लो जो तुमने स्वयं जाने है। क्या तुमने स्वयं कुछ जाना है?

तुम बहुत कुछ जानते हो; लेकिन तुम्हारा सब जानना उधार है। किसी से तुमने सुना है; किसी ने तुम्हें दिया है। शिक्षकों ने, मां-बाप ने, समाज ने, तुम्हें संस्कारित किया है। तुम ईश्वर के बारे में जानते हो, तुम प्रेम के बारे में जानते हो, तुम प्रेम के संबंध में जानते है, तुम ध्यान को जानते हो। लेकिन तुम यथार्थत: कुछ भी नहीं जानते। तुमने इनमें से किसी का स्वाद नहीं लिया है। यह सब उधार है। किसी दूसरे ने स्वाद लिया है; स्वाद तुम्हारा निजी नहीं है। किसी दूसरे ने देखा है; तुम्हारी भी आंखें है। लेकिन तुमने उनका उपयोग नहीं किया है। किसी ने अनुभव किसा—किसी बुद्ध ने, किसी जीसस ने—और तुम उनका ज्ञान उधार लिए बैठे हो।

उधार ज्ञान झूठा है। और वह तुम्हारे काम का नहीं है। उधार ज्ञान अज्ञान से भी खतरनाक है। क्योंकि अज्ञान तुम्हारा है, और ज्ञान उधार है। इससे तो अज्ञानी रहना बेहतर है। कम से कम तुम्हारा तो है। प्रामाणिक तो है, सच्चा है, ईमानदार है। उधार ज्ञान मत ढ़ोओ; अन्यथा तुम भूल जाओगे कि तुम अज्ञानी हो; और तुम अज्ञानी के अज्ञानी बने रहोगे। यह सूत्र कहता है: 'विशेष ज्ञान का पालन-पोषण करो।'

सदा ही जानने की कोशिश इस ढंग से करो कि वह सीधा हो, सच हो, प्रत्यक्ष हो। कोई विश्वास मत पकड़ो;विश्वास तुम्हें भटका देगा। अपने पर भरोसा करो। श्रद्धा करो। और अगर तुम अपने पर ही श्रद्धा नहीं कर सकते तो किसी दूसरे पर कैसे श्रद्धा कर सकते हो?

सारिपुत्र बुद्ध के पास आया और उसने कहा: 'मैं आपमें विश्वास करने के लिए आया हूं;मैं आ गया हूं। मुझे आप में श्रद्धा हो, इसमें मेरी सहायता करें।' बुद्ध ने कहा: 'अगर तुम्हें स्वयं में श्रद्धा नहीं है तो मुझमें श्रद्धा कैसे करोगे? मुझे भूल जाओ। पहले स्वयं में श्रद्धा करो; तो ही तुम्हें किसी दूसरे में श्रद्धा होगी।'

यह स्मरण रहे, अगर तुम्हें स्वयं में ही श्रद्धा नहीं है। तो किसी में भी श्रद्धा नहीं हो सकती। पहली श्रद्धा सदा अपने में होती है। तो ही वह प्रवाहित हो सकती है। बह सकती है। तो ही वह दूसरों तक पहुंच सकती है। लेकिन अगर तुम कुछ जानते ही नहीं हो तो अपने में श्रद्धा कैसे करोगे? अगर तुम्हें कोई अनुभव ही नहीं है तो स्वयं में श्रद्धा कैसे होगी? अपने में श्रद्धा करो। और मत सोचो कि हम परमात्मा को ही दूसरों की आंखों से देखते है; साधारण अनुभवों में भी यही होता है। कोशिश करो कि साधारण अनुभव भी तुम्हारे अपने अनुभव हों। वे तुम्हारे विकास में सहयोगी होंगे। वे तुम्हें प्रौढ़ बनाएँगे। वे तुम्हें परिपक्वता देंगे।

बडी अजीब बात है कि तुम दूसरों की आँख से देखते हो तुम दूसरों की जिंदगी से जीते हो। तुम गुलाब को सुंदर कहते हो। क्या यह सच में ही तुम्हारा भाव है। या तुमने दूसरों से सुन रखा है। कि गुलाब सुंदर होता है। क्या यह तुम्हारा जानना है? क्या तुमने जाना है? तुम कहते हो कि चाँदनी अच्छी है, सुंदर है। क्या यह तुम्हारा जानना है? यह कवि इसके गीत गाते रहे है और तुम बस उन्हें दुहरा रहे हो?

अगर तुम तोते जैसे दुहरा रहे हो तो तुम अपना जीवन प्रामाणिक रूप से नहीं जी सकते हो। जब भी तुम कुछ कहो, जब भी तुम कुछ करो, तो पहल अपने भीतर जांच कर लो कि क्या यह मेरा अपना जानना है? मेरा अपना अनुभव है। उस सबको बाहर फेंक दो जो तुम्हारा नहीं है; वह कचरा है। और सिर्फ उसको ही मूल्य दो, पोषण दो, जो तुम्हारा है। उसके द्वारा ही तुम्हारा विकास होगा।

'यथार्थ में विशेष ज्ञान और विशेष कृत्य का पालन-पोषण करो।'

यहां यर्थाथ में, को सदा स्मरण रखो। कुछ करो। क्या कभी तुमने स्वयं कुछ किया है। या तुम केवल दूसरों के हुक्म बजाते रहे हो? केवल दूसरों का अनुसरण करते रहे हो, कहते है: 'अपनी पत्नी को प्रेम करो।' क्या तुमने यथार्थत: अपनी पत्नी को प्रेम किया है? या तुम सिर्फ कर्तव्य निभा रहे हो; क्योंकि तुम्हें कहा गया है, सिखाया गया है कि पत्नी को प्रेम करो, या मां को प्रेम करो। या पिता को प्रेम करो। तुम्हारा प्रेम भी अनुकरण मात्र है। क्या तुमने कभी ऐसा महसूस किया है तुम और प्रेम साथ थे। बिना किसी विचार के या संस्कार के। क्या तुम्हारे प्रेम में ऐसा कभी हुआ है कि तुम्हारे प्रेम मे किसी की सिखावन न काम कर रही हो? क्या कभी ऐसा हुआ है कि तुम किसी का अनुकरण नहीं कर रहे हो। क्या तुमने कभी प्रामाणिक रूप से प्रेम किया है।

तुम अपने को धोखा दे रहे हो। तुम कह सकते हो कि हां किया है। लेकिन कुछ कहने के पहले ठीक से निरीक्षण कर लो। अगर तुमने सचमुच प्रेम किया होता तो तुम रूपांतरित हो जाते; प्रेम का यह विशेष कृत्य ही तुम्हें बदल डालता। लेकिन उसने तुम्हें नहीं बदला। क्योंकि तुम्हारा प्रेम झूठा है। और तुम्हारा पूरा जीवन ही झूठ हो गया है। तुम ऐसे काम किए जाते हो जो तुम्हारे अपने नहीं है। कुछ करो जो तुम्हारा अपना हो; और उसका पोषण करो।

बुद्ध बहुत अच्छे है; लेकिन तुम उनका अनुसरण नहीं कर सकते। जीसस बहुत, महावीर बहुत अच्छे है, लेकिन तुम उनका अनुसरण नहीं कर सकते हो। और अगर तुम अनुसरण करोगे तो तुम कुरूप हो जाओगे। तुम कार्बन कापी हो जाओगे। तब तुम झूठे हो जाओगे। और अस्तित्व तुम्हें स्वीकार नहीं करेगा। वहां कुछ भी झूठ स्वीकार नहीं है।

बुद्ध को प्रेम करो, जीसस को प्रेम करो; लेकिन उनकी कार्बन कापी मत बनो। नकल मत करो। सदा अपनी निजता को अपने ढंग से खिलनें दो। तुम किसी दिन बुद्ध जैसे हो जाओगे; लेकिन मार्ग बुनियादी तौर पर तुम्हारा अपना होगा। किसी दिन तुम जीसस जैसे हो सकते हो। लेकिन तुम्हारा यात्रा-पथ भिन्न होगा। तुम्हारे अनुभव

भिन्न होगे। एक बात पक्की है। जो भी मार्ग हो, जो भी अनुभव हो, वह प्रामाणिक होना चाहिए। असली होना चाहिए। तुम्हारा होना चाहिए। तब तुम किसी ने किसी दिन पहुंच जाओगे।

असत्य से तुम सत्य तक नहीं पहूंच सकते। असत्य तुम्हें और असत्य में ले जाएगा। जब कुछ करो तो भली भांति स्मरण करो कि यह तुम्हारा अपना कृत्य हो, तुम खुद कर रहे हो। किसी का अनुकरण नहीं कर रहे हो। तो एक छोटा सा कृत्य भी, एक मुस्कुराहट भी सतोरी का, समाधि का स्त्रोत बन सकती है।

तुम अपने घर लौटते हो और बच्चों को देखकर मुस्कराते हो। यह मुस्कुराहट झूठी है। तुम अभिनय कर रहे हो। तुम इसलिए मुस्कराते हो क्योंकि मुस्कराना चाहिए। यह ऊपर से चिपकायी गई मुस्कुराहट है। यह मुस्कुराहट कृत्रिम है, यांत्रिक है। और तुम इसके इतने अभ्यस्त हो चुके हो कि तुम बिलकुल भूल ही गये हो सच्ची मुस्कुराहट क्या है। तुम हंस सकते हो। लेकिन संभव है वह हंसी तुम्हारे केंद्र से न आ रही हो।

सदा ध्यान रखो कि तुम जो कर रहे हो उसमें तुम्हारा केंद्र सम्मिलित है या नहीं। अगर तुम्हारा केंद्र उस कृत्य मे सम्मिलित नहीं है तो बेहतर है कि उस कृत्य को न करो। उसे बिलकुल भूल जाओ। कोई तुम्हें कुछ करने के लिए मजबूर नहीं कर रहा है। बिलकुल मत करो। अपनी उर्जा को उस घड़ी के लिए बचा कर रखो जब कोई सच्चा भाव तुम्हारे भीतर उठे। और तब तुम उस में डूब कर उसे करो। यो ही मत मुस्कुराओ; उर्जा को बचाकर रखो। मुस्कुराहट आएगी, जो तुम्हें पूरा का पूरा बदल देगी। वह समग्र मुस्कुराहट होगी। तब तुम्हारे शरीर की एक-एक कोशिका मुस्कुराएगी। तब वह विस्फोट होगा, अभिनय नहीं होगा।

और बच्चे जानते है, तुम उन्हें धोखा नहीं दे सकते हो। और जब तुम उन्हें धोखा दे सको, समझ लेना वे बच्चे नहीं रहे। वे जानते है कि कब तुम्हारी मुस्कुराहट झूठी होती है। वे झट ताड़ लेते है। वे जानते है कि कब तुम्हारे आंसू झूठे है। तुम्हारी हंसी झूठी है। ये छोटे-छोटे कृत्य है, लेकिन तुम छोटे-छोटे कृत्यों से ही बने हो। किसी बड़े कृत्य की मत सोचो; मत सोचो कि किसी बड़े कृत्य में सच्चाई बरतूंगा। अगर तुम छोटी-छोटी चीजों में झूठे हो तो तुम सदा झूठे ही रहोगे। बड़ी चीजों में झूठ होना तो और भी सरल है।

पर यह सब झूठा है। थोड़ी कल्पना करो। कि अगर समाज की दृष्टि बदल जाए तो क्या होगा। ऐसी ही बदलाहट जब सोवियत रूस में या चीन में हुई तो तुरंत साधु-महात्मा वहां से विदा हो गये। अस वहां उनके लिए कोई आदर नहीं है।

मुझे याद आता है कि मेरे एक मित्र, जो बौद्ध भिक्षु है, स्टैलिन के दिनों में सोवियत रूप गये थे। उन्होंने लौटकर मुझे बताया कि वहां जब भी कोई व्यक्ति उससे हाथ मिलाता था तो तुरंत झिझक कर पीछे हट जाता था। और कहता था कि तुम्हारे हाथ बुर्जआ है। शोषण के हाथ है।

उनके हाथ सचमुच सुंदर थे; भिक्षु होकर उन्हें काम नहीं करना पड़ता था। वे फकीर थे, शाही फकीर,उनका श्रम से वास्ता नहीं पडा था। उनके हाथ बहुत कोमल थे। सुंदर कोमल और स्त्रैण थे। भारत में जब कोई उनके हाथ छूता तो कहता कि कितने सुंदर हाथ है। लेकिन सोवियत रूस में जब कोई उनके हाथ अपने हाथ में लेता तो तुरंत सिकुड़कर पीछे हट जाता। उसकी आंखों में निंदा भर जाती। और वह उन्हें कहता कि तुम्हारे हाथ बुर्जआ है। शोषक के हाथ है। वे वापस आकर मुझसे बोले कि मैंने इतना निंदित महसूस किया कि मेरा मत होता है कि मजदूर हो जाउं।

रूस में साधु-महात्मा विदा हो गए; क्योंकि आदर न रहा। सब साधुता दिखावटी थी। प्रदर्शन की चीज थी। आज रूस में केवल सच्चा संत ही संत हो सकता हे। झूठे नकली संतों के लिए वहां कोई गुंजाइश नही है। आज तो वहां संत होने के लिए भारी संघर्ष करना पड़ेगा। क्योंकि सारा समाज विरोध में होगा। भारत में तो जीने का सबसे सुगम ढंग साधु-महात्मा होना है। सब लोग आदर देते है। यहां तुम झूठे हो सकते हो। क्योंकि उसमे लाभ ही लाभ है।

तो इसे स्मरण रखो। सुबह से ही, जैसे ही तुम आँख खोलते हो,सिर्फ सच्चे और प्रामाणिक होने की चेष्टा करो। ऐसा कुछ मत करो जो झूठ और नकली हो। सिर्फ सात दिन के लिए यह स्मरण बना रहे कि कुछ भी झूठ और नकली हो। कुछ भी अप्रमाणिक नहीं करना है। जो भी गंवाना पड़े जो भी खोना पड़े खो जाएं। जो भी होना हो, हो जाए;लेकिन सच्चे बने रहो। और सात दिन के भीतर नए जीवन का उन्मेष अनुभव होने लगेगा। तुम्हारी मृत पर्तें टूटने लगेंगी। और नयी जीवंत धारा प्रवाहित होने लगेगी। तुम पहली बार पुनर्जीवन अनुभव करोगे। फिर से जीवित हो उठोगे।

कृत्य का पोषण करो, ज्ञान का पोषण करो—यथार्थ में, स्वप्न में नहीं। जो भी करना चाहो करो। लेकिन ध्यान रखो कि यह काम सच में मैं कर रहा हूं। या मेरे द्वारा मेरे मां बाप कर रहे है? क्योंकि कब के जा चुके मरे हुए लोग, मृत माता-पिता, समाज, पुरानी पीढ़ियाँ, सब तुम्हारे भीतर अभी सक्रिय है। उन्होंने तुम्हारे भीतर ऐसे संस्कार भर दिए है कि तुम अब भी उनको ही पूरा करने में लगे हो। तुम्हारे मां-बाप अपने मृत मां-बाप को पूरा करते रहे और तुम अपने मृत मां बाप को पूरा करने मे लगे हो। और आश्चर्य कि कोई भी पूरा नहीं हो रहा है। तुम उसे कैसे पूरा कर सकते हो जो मर चूका है। लेकिन मुर्दे ये सब मुर्दे तुम्हारे बीच जी रहे है।

जब भी तुम कुछ करो तो सदा निरीक्षण करो कि यह मेरे माध्यम से मेरे पिता कर

रहे है। या मैं कर रहा हूं। जब तुम्हें क्रोध आए तो ध्यान दो कि यह मेरा क्रोध है या इसी ढंग से मेरे पिता क्रोध किया करते थे जिसे-जिसे में दोहरा भर रहा हूं।

मैंने देखा है कि पीढ़ी दर पीढ़ी वही सिलसिला चलता रहता है। पुराने ढंग ढांचे दोहराते रहते है। अगर तुम विवाह करते हो तो वह विवाह करीब-करीब वैसा ही होगा जैसा तुम्हारे मां-बाप ने किया था। तुम अपने पिता की भांति व्यवहार करोगे। तुम्हारी पत्नी अपनी मां की भांति व्यवहार करेगी। और दोनों मिलकर वही सब उपद्रव करोगे जो उन्होने किया था।

जब क्रोध आए तो गौर से देखो कि मैं क्रोध कर रहा हूं या कि कोई दूसरा व्यक्ति क्रोध कर रहा है रहे है। या मैं कर रहा हूं। जब तुम प्रेम करो तो याद रखो; तुम ही प्रेम कर रहे हो या कोई और, जब तुम कुछ बोलों तो देखो कि मैं बोल रहा हूं या मेरा शिक्षक बोल रहा है। जब तुम कोई भाव-भंगिमा बनाओ तो देखो कि यह तुम्हारी भंगिमा है या कोई दूसरा ही वहां है।

यह कठिन होगा; लेकिन यही साधना है, यही आध्यात्मिक साधना है। और सारे झूठों को विदा करो। थोड़े समय के लिए तुम्हें सुस्ती पकड़ेगी, उदासी घेरेंगी; क्योंकि तुम्हारे झूठ गिर जाएंगे। और सत्य को आने में और प्रतिष्ठित होने में थोड़ा समय लगेगा। अंतराल का एक समय होगा; उस समय को भी आने दो। भयभीत मत होओ। आतंकित मत होओ। देर-अबेर तुम्हारे मुखौटे गिर जाएंगे। तुम्हारा झूठा व्यक्तित्व विलीन हो जाएगा। और उसकी जगह तुम्हारा असली चेहरा तुम्हारा प्रामाणिक व्यक्तित्व अस्तित्व में आएगा। प्रकट होगा। और उसी प्रामाणिक व्यक्तित्व से तुम ईश्वर को साक्षात्कार कर सकते हो।

इसलिए यह सूत्र कहता है: जैसे मुर्गी अपने बच्चों का पालन पोषण करती है। वैसे ही यथार्थ में विशेष ज्ञान और विशेष कृत्य का पालन-पोषण करो।

ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र, भाग-तीन

प्रवचन-45

विज्ञान भैरव तंत्र विधि—69 (ओशो)

'यथार्थत: बंधन और मोक्ष सापेक्ष है; ये केवल विश्‍व से भयभीत लोगों के लिए है। यह विश्‍व मन का प्रतिबिंब है। जैसे तुम पानी में एक सूर्य के अनेक सूर्य देखते हो, वैसे ही बंधन और मोक्ष को देखो।'

'यथार्थत: बंधन और मोक्ष सापेक्ष है;–शिव

यह बहुत गहरी विधि है; यह गहरी से गहरी विधियों में से एक है। और विरले लोगों ने ही इसका प्रयोग किया है। झेन इसी विधि पर आधारित है। यह विधि बहुत कठिन बात कह रही है—समझने में कठिन, अनुभव करने में कठिन नहीं है। परंतु पहले समझना जरूरी है।

यह सूत्र कहता है, कि हम संसार और निर्वाण दो नहीं है। वे एक ही है। स्वर्ग और नरक दो नहीं है। वे एक ही है। वैसे ही बंधन और मोक्ष दो नहीं है, वे भी एक ही है। यह समझना कठिन है, क्योंकि हम किसी चीज को आसानी से तभी सोच पात है जब वह ध्रुवीय विपरीतता में बंटी हो।
हम कहते है कि यह संसार बंधन है; इससे छूटा जाए और मुक्त हुआ जाए? तब मुक्ति कुछ है जो बंधन के विपरीत है, जो बंधन नहीं है। लेकिन यह सूत्र कहता है कि दोनों एक है, मोक्ष और बंधन एक है। और जब तक तुम दोनों से नहीं मुक्त होते, तुम मुक्त नहीं हो। बंधन तो बाँधता ही है,मोक्ष भी बाँधता है। बंधन तो गुलामी है ही मोक्ष भी गुलामी है।

इसे समझने की कोशिश करो। उस आदमी को देखो जो बंधन के पार जाने की चेष्टा में लगा है। वह क्या कर रहा है। वह अपना घर छोड़ देता है, परिवार छोड़ देता है, धन दौलत छोड़ देता है, संसार की चीजें छोड़ देता है। समाज छोड़ देता है। ताकि बंधन के बाहर हो सके, संसार की ज़ंजीरों से मुक्त हो सके। लेकिन तब वह अपने लिए नयी ज़ंजीरें गढ़ने लगता है। और वे ज़ंजीरें नकारात्मक है। परोक्ष है।

मैं एक संत को मिला जो धन नहीं छूते है। वे बहुत सम्मानित संत है। उनका सम्मान वे लोग जरूर करेंगे जो धन के पीछे पागल है। यह व्यक्ति उनके विपरीत ध्रुव पर चला गया है। अगर तुम उनके हाथ में धन रख दो तो वे उसे ऐसे फेंक देंगे जैसे कि वह जहर हो या कि तुमने उनके हाथ पर सांप रख दिया हो। वे उसे फेंक ही नहीं देंगे, वे आतंकित हो उठेंगे। उनका शरीर कांपने लगेगा।

क्या हुआ है? वे धन से लड़ रहे है। वे पहले जरूर ही लोभी, अति लोभी व्यक्ति रहे होंगे। तभी वे दूसरी अति पर पहूंच गए है। उनकी धन की पकड़ आत्यंतिक रही होगी;वे धन के लिए पागल रहे होंगे। वे धन से ग्रस्त रहे होंगे। वे अब भी धन से ग्रस्त है, लेकिन अब उनकी दिशा बदल गई है। वे पहले धन की तरफ भाग रहे थे; अब वे धन के विपरीत भाग रहे है।

मैं एक संन्यासी को जानता हूं जो किसी स्त्री को नहीं देखता। वे बहुत घबरा जाते है। अगर कोई स्त्री मौजूद हो तो आंखें झुका रखते है। वे सीधे नहीं देखते। क्या समस्या है? निश्चित ही, वे अति कामुक रहे होंगे। कामवासना से बहुत ग्रस्त रहे होंगे। वह ग्रस्तता अभी भी जारी है। लेकिन पहले वे स्त्रियों के पीछे भागते थे अब वे स्त्रियों से दूर भाग रहे है। पर स्त्रियों से ग्रस्तता बनी हुई है; चाहे वे स्त्रियों की और भाग रहे हों या स्त्रियों से दूर भाग रहे हो। उनका मोह बना ही हुआ है।

वे सोचते है कि अब स्त्रियों से मुक्त है, लेकिन यह एक नया बंधन है। तुम प्रतिक्रिया करके मुक्त नहीं हो सकते। जिस चीज से तुम भागोगे वह पीछे के रास्ते से तुम्हें बाँध लेगी; उससे तुम बच नहीं सकते हो। यदि कोई व्यक्ति संसार के विरोध में मुक्त होना चाहता है तो वह कभी मुक्त नहीं हो सकता; वह संसार में ही रहेगा। किसी चीज के विरोध में होना भी एक बंधन है।

यह सूत्र कहता है: 'यथार्थत: बंधन और मोक्ष सापेक्ष है......।'
वे विपरीत नहीं, सापेख है। मोक्ष क्या है? तुम कहते हो, जो बंधन नहीं है। वह मोक्ष है। और बंधन क्या है? तब तुम कहते हो, जो मोक्ष नहीं है वह बंधन है। तुम एक दूसरे से उनकी परिभाषा कर सकते हो। वे गर्मी और ठंडक की भांति है। विपरीत नही है। गर्मी क्या है और ठंडक क्या है? वे एक ही चीज की कम और ज्यादा मात्राएं है—ताप की मात्राएं है। लेकिन चीज एक ही है; गर्मी और ठंडक सापेक्ष है।

तंत्र कहता है, बंधन और मोक्ष संसार और निर्वाण दो चीजें नहीं है; वे सापेक्ष है, वे एक ही चीज की दो अवस्थाएं है। इसलिए तंत्र अनूठा है। तंत्र कहता है कि तुम्हें बंधन से ही मुक्त नहीं होना है, तुम्हें मोक्ष से भी मुक्त होना है। जब तक तुम दोनों से मुक्त नहीं होते, तुम मुक्त नहीं हो।

तो पहली बात कि किसी भी चीज के विरोध में जीने की कोशिश मत करो, क्योंकि ऐसा करके तुम उसी चीज की कोई भिन्न अवस्था में प्रवेश कर जाओगे। वह विपरीत दिखाई पड़ता है। लेकिन विपरीत है नहीं। कामवासना से ब्रह्मचर्य में जाने की चेष्टा करोगे तो तुम्हारा ब्रह्मचर्य कामुकता के सिवाय और कुछ नहीं होगा। लाभ से अलोभ में जाने की चेष्टा मत करो, क्योंकि वह अलोभ भी सूक्ष्म लोभ ही होगा। इसीलिए अगर कोई परंपरा अलोभ सिखाती है तो उसमें भी तुम्हें कुछ लालच देती है।

जो लोग लोभी है, पर लोभ के लोभी है। वे इस उपदेश से बहुत प्रभावित होंगे। वे इसके लालच में बहुत कुछ छोड़ने को तैयार हो जायेंगे। कि 'अगर तुम लोभ को छोड़ दोगे तो तुम्हें परलोक में बहुत मिलेगा'। लेकिन पानी की प्रवृति,पाने की चाह बनी रहती है। अन्यथा लोभी आदमी अलोभ की तरफ क्यों जाएगा? उनके लोभ की सूक्ष्म तृप्ति के लिए कुछ अभिप्राय कुछ हेतु तो चाहिए ही।

तो विपरीत ध्रुवों का निर्माण मत करो। सभी विपरीतताएं परस्पर जुड़ी है। वे एक ही चीज की भिन्न-भिन्न मात्राएं है। ओर अगर तुम्हें इसका बोध हो जाए तो तुम कहोगे कि दोनों ध्रुव एक है। अगर तुम यह अनुभव कर सके, और अगर यह अनुभव तुम्हारे भीतर गहरा हो सके तो तुम दोनों से मुक्त हो जाओगे। तब तुम न संसार चाहते हो न मोक्ष। वस्तुतः तब तुम कुछ भी नहीं चाहते हो; तुमने चाहना ही छोड़ दिया। और उस छोड़ने में ही तुम मुक्त हो गए। इस भाव में ही कि सब कुछ समान है, भविष्य गिर गया। अब तुम कहां जाओगे?

यदि कामवासना और ब्रह्मचर्य एक है, तो कहां जाना है। यदि लोभ और अलोभ एक ही है। हिंसा और अहिंसा एक ही है, तो फिर जाना कहा है? कहीं जाने को न बचा। सारी गति समाप्त हुई; भविष्य ही न रहा। तब तुम किसी चीज की भी कामना, कोई भी कामना नहीं कर सकते, क्योंकि सब कामनाए एक ही है। फर्क केवल परिमाण को होगा। तुम क्या कामना करोगे। तुम क्या चाहोगे?

कभी-कभी मैं लोगों से पूछता हूं, जब मेरे पास आते है। मैं पूछता हूं: 'सच में तुम क्या चाहते हो?' उनकी चाहत उनसे ही पैदा होती है। वे जैसे है उसमें ही उनकी जड़ होती है। अगर कोई लोभी है। तो वह अलोभ की चाह करता है। अगर कोई कामी है तो वह ब्रह्मचर्य की कामना करता है। कामी कामवासना से छूटना चाहता है। क्योंकि वह उससे पीड़ित है। दुःखी है। लेकिन ब्रह्मचर्य की एक कामना की जड़ उसकी कामुकता में की है।

लोग पूछते है: 'इस संसार से कैसे छूटा जाए?'

संसार उन पर बहुत भरी पड़ रहा है। वे संसार के बोझ के नीचे दबे जा रहे है। और वे संसार से बुरी तरह चिपके भी है। क्योंकि जब तक तुम संसार से चिपकते नहीं हो तब तक संसार तुम्हें बोझिल नहीं कर सकता। यह बोझ तुम्हारे सिर में है; और उसका कारण तुम हो बोझ नहीं। तुम इसे ढो रहे हो। लोग सारा संसार उठाए है; और फिर वे दुःखी होते है। और दुःख के इसी अनुभव से विपरीत कामना का उदय होता है। और वे विपरीत के लिए लालायित हो उठते है।

पहले वह धन के पीछे भाग रहे थे; अब वे ध्यान के पीछे भाग रहे है। पहले वह इस लोक में कुछ पाने के लिए भाग दौड़ कर रहे थे; अब वे परलोक में कुछ पाने के लिए भाग दौड़ कर रहे है। लेकिन भाग दौड़ जारी है। और भाग दौड़ ही समस्या है; विषय अप्रासंगिक है। कामना समस्या है; चाह समस्या है। तुम क्या चाहते हो, यह अर्थपूर्ण नहीं है। तुम चाहते हो, यह समस्या है।

और तुम चाह के विषय बदलते रहते हो। आज तुम 'क' चाहते हो, कल 'ख' चाहते हो, और तुम समझते हो कि मैं बदल रहा हूं। और फिर परसों तुम 'ग' चाह करते हो। और तुम सोचते हो कि मैं रूपांतरित हो गया। लेकिन तुम वही हो। तुमने 'क' की चाह की, तुमने 'ख' की चाह की। और तुमने ही 'ग' की चाह की; लेकिन क-ख-ग ये सब तुम नही हो। तुम तो वह हो जो चाहता है। जो कामना करता है। और वह वही का वही रहता है।

तुम बंधन चाहते हो। और फिर उससे निराशा हो जाते हो। ऊब जाते हो। और तब तुम मोक्ष की कामना करने लगते हो। लेकिन तुम कामना करना जारी रखते हो। और कामना बंधन है; इसलिए तुम मोक्ष की कामना नहीं करते। चाह ही बंधन है। इसलिए तुम मोक्ष नहीं चाह सकते। जब कामना विसर्जित होती है तो मोक्ष है; चाह का छूट जाना मोक्ष है।

इसी लिए यह सूत्र कहता है: 'यथार्थतः बंधन और मोक्ष सापेक्ष है।'
तो विपरीत से ग्रस्त मत होओ।

'ये केवल विश्व से भयभीत लोगों के लिए है।'
बंधन और मोक्ष, ये शब्द उनके लिए है जो विश्व से भयभीत है।

'यह विश्व मन का प्रतिबिंब है।'

तुम संसार में जो कुछ देखते हो वह प्रतिबिंब है। अगर वह बंधन जैसा दिखता है तो उसका मतलब है कि वह तुम्हारा प्रतिबिंब है। और अगर यह विश्व मुक्ति जैसा दिखता है तो भी वह तुम्हारा प्रतिबिंब है।

'जैसे तुम पानी में एक सूर्य के अनेक सूर्य देखते हो, वैसे ही बंधन और मोक्ष को देखा।'
सुबह सूरज ऊगता है। और सरोवर उनके—बड़े और छोटे, सुंदर और कुरूप,अनेक टुकड़े कर देता है। एक ही सूरज इन अनेक छवियों में प्रतिबिंबित होता है। अनेक रूप और आकारों में कहीं गंदा और कही शुद्ध। लेकिन जो प्रतिबिंब को देख कर यथार्थ को देखेगा उसे एक ही सूर्य दिखाई देगा।

जिस संसार को तुम देखते हो वह तुम्हारा प्रतिबिंब है। अगर तुम कामुक हो तो सारा संसार तुम्हें कामुक मालूम पड़ेगा। और अगर तुम चोर हो तो सारा संसार तुम्हें उसी धंधे में संलग्न मालूम पड़ेगा।

एक बार मुल्ला नसरूद्दीन और उसकी पत्नी, दोनों मछली पकड़ रहे थे। और वह जगह प्रतिबंधित थी। केवल लाइसेंस लेकर ही लोग वहां मछली पकड़ सकत थे। अचानक एक पुलिस का सिपाही वहां आ गया। मुल्ला की पत्नी ने कहा: 'मुल्ला, तुम्हारे पास लाइसेंस है, तुम भागों; इस बीच मैं यहां सक खिसक जाऊगी।' मुल्ला भागने लगा, वह भागता गया। भागता गया। और सिपाही उसका पीछा करता रहा। मुल्ला ने अपनी पत्नी को वही छोड़ दिया और भागने लगा।

दौड़ते-दौड़ते मुल्ला को ऐसा लगा की उसकी छाती फट जाएगी। तभी उस सिपाही ने उसे पकड़ लिया। सिपाही भी पसीने से तरबतर था। उसने मुल्ला से पूछा: 'तुम्हारा लाइसेंस कहां है?' मुल्ला ने लाइसेंस निकाल कर दिखाया। सिपाही ने गौर से लाइसेंस को देखा और उसे सही पाया। और तब उसने पूछा: नसरूद्दीन,फिर तुम भाग क्यों रहे थे? तुम्हारे पास तो लाइसेंस था।

मुल्ला ने कहा: 'मैं एक डाक्टर के पास जाता हूं, और वह कहता है कि भोजन के बाद आधा मील दौड़ करो।' सिपाही ने कहा: 'लेकिन वह तो ठीक है, लेकिन तुम देख रहे थे कि मैं तुम्हारे पीछे भाग रहा हूं, चिल्ला रहा हूं। तब तुम क्यों नहीं रुके'? मुल्ला ने कहा: 'मैं समझा कि शायद तुम भी उसी डाक्टर के पास जाते हो।'

बिलकुल तर्कसंगत है; यही हो रहा है। तुम अपने चारों और जो कुछ देखते हो वह तुम्हारा प्रतिबिंब ज्यादा है। यथार्थ कम है। तुम अपने को ही सब जगह प्रतिबिंबित देख रहे हो। और जिस क्षण तुम बदलते हो, तुम्हारा प्रतिबिंब भी बदल जाता है। और जिस क्षण तुम समग्ररतः: मौन हो जाते हो, शांत हो जाते हो, सारा संसार भी शांत हो जाता है। संसार बंधन नहीं है, बंधन केवल एक प्रतिबिंब है। संसार मोक्ष भी नहीं है। मोक्ष भी प्रतिबिंब है। बुद्ध को सारा संसार निर्वाण में दिखाई पड़ता है। कृष्ण को सारा जगत नाचता-गाता, आनंद में, उत्सव मनाता हुआ दिखाई पड़ता है। उन्हें कही कोई दुःख नहीं दिखाई पड़ता है।

लेकिन तंत्र कहता है कि तुम जो भी देखते हो वह प्रतिबिंब ही है। जब तक सारे दृश्य नहीं विदा हो जाते और शुद्ध दर्पण नही बचता—प्रतिबिंबरहित दर्पण। वही सत्य है। अगर कुछ भी दिखाई देता है तो वह प्रतिबिंब ही है।

सत्य एक है। अनेक तो प्रतिबिंब ही हो सकते है। और एक बार यह समझ में आ जाए—सिद्धांत के रूप में नहीं, अस्तित्वगत, अनुभव के द्वारा—तो तुम मुक्त हो, बंधन और मोक्ष दोनों से मुक्त हो।

इसे इस ढंग से देखो। जब तुम बीमार होते हो तो स्वास्थ्य की कामना करते हो। यह स्वास्थ्य की कामना तुम्हारी बीमारी का ही अंग है। अगर तुम स्वस्थ ही हो तो तुम स्वास्थ्य की कामना नहीं करोगे। कैसे करोगे? अगर तुम सच में स्वस्थ हो तो फिर स्वास्थ्य की चाह कहां है? उसकी जरूरत नहीं है।

अगर तुम यथार्थत: स्वस्थ तो तुम्हें महसूस नहीं होता कि मैं स्वस्थ हूं। सिर्फ बीमार, रोगग्रस्त लोग ही महसूस कर सकते है कि हम स्वस्थ है। उसकी जरूरत क्या है। तुम कैसे महसूस कर सकते हो की तुम स्वस्थ हो। अगर तुम स्वास्थ ही पैदा हुए और कभी नहीं बीमार हुए, तो क्या तुम कभी अपने स्वास्थ को महसूस कर सकोगे?

स्वास्थ तो है, लेकिन उसका अहसास नहीं हो सकता। उसका अहसास तो विपरीत के द्वारा, विरोधी के द्वारा ही हो सकता है। विपरीत के द्वारा ही, उसकी पृष्ठभूमि में ही किसी चीज का अनुभव होता है। अगर तुम बीमार हो तो स्वास्थ का अनुभव कर सकते हो; और अगर तुम्हें स्वास्थ्य का अनुभव हो रहा है तो निश्चित जानो कि तुम अब भी बीमार हो।

तो नरोपा ने कहा: 'हां और नहीं दोनों। हां इसलिए कि अब कोई बंधन नहीं रहा। और नहीं इसलिए कि बंधन के जाने के साथ मुक्ति भी विलीन हो गई। मुक्ति बंधन का ही हिस्सा थी। अब मैं दोनों के पार हूं; न बंधन में हूं, और न मोक्ष में।'

धर्म को चाह मत बनाओ। धर्म को कामना मत बनाओ। मोक्ष को, निर्वाण को कामना का विषय मत बनाओ। वह तभी घटित होता है जब सारी कामनाए खो जाती है।

ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र, भाग-तीन

प्रवचन-45

विज्ञान भैरव तंत्र विधि—70 (ओशो)

'अपनी प्राण शक्ति को मेरुदंड के ऊपर उठती, एक केंद्र की और गति करती हुई प्रकाश किरण समझो, और इस भांति तुममें जीवंतता का उदय होता है।'
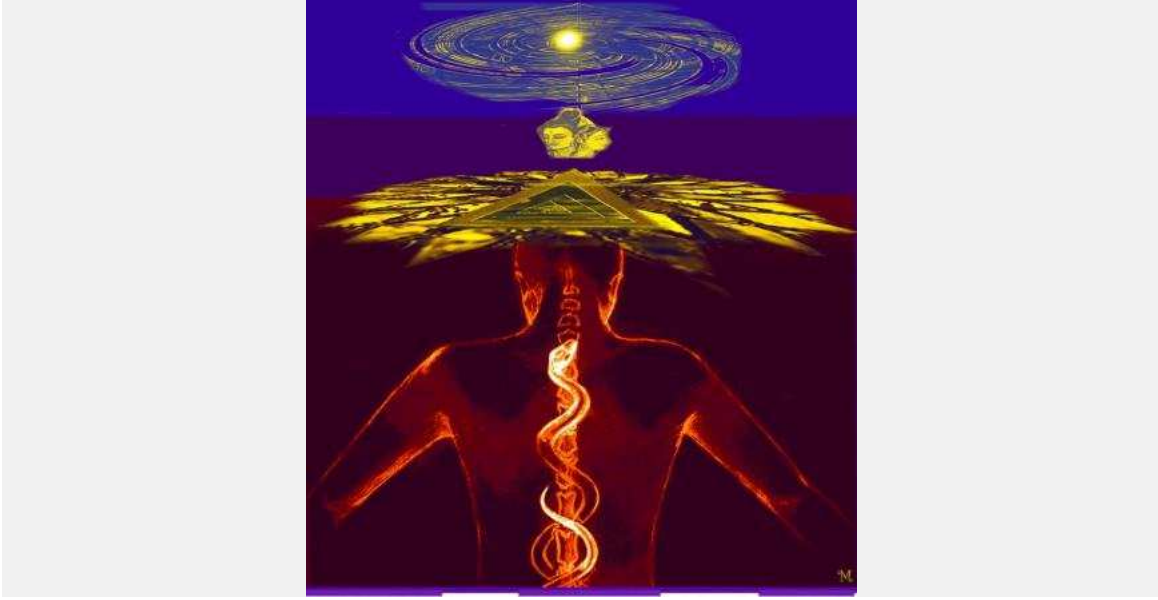
'अपनी प्राण शक्ति को मेरुदंड के ऊपर उठती,....शिव

योग के अनेक साधन अनेक उपाय इस विधि पर आधारित है। पहले समझो कि यह क्या है, और फिर इसके प्रयोग को लेंगे।

मेरुदंड, रीढ़ तुम्हारे शरीर और मस्तिष्क दोनों का आधार है। तुम्हारा मस्तिष्क, तुम्हारा सिर तुम्हारे मेरुदंड का ही अंतिम छोर है। मेरुदंड पूरे शरीर की आधारशिला है। और अगर मेरुदंड युवा है तो तुम युवा हो। और अगर मेरुदंड बूढ़ा है तो तुम बढ़े हो। अगर तुम अपने मेरुदंड को युवा रख सको तो बूढ़ा होना कठिन है। सब कुछ इस मेरूदंड पर निर्भर है। अगर तुम्हारा मेरूदंड जीवंत है तो तुम्हारे मन मस्तिष्क में मेधा होगी। चमक होगी। और अगर तुम्हारा मेरूदंड जड़ और मृत है तो तुम्हारा मन भी बहुत जड़ होगा। समस्त योग अनेक ढंग से तुम्हारे मेरूदंड को जीवंत, युवा,ताजा और प्रकाशपूर्ण की चेष्टा करता है।
मेरूदंड के दो छोर है। उसके आरंभ का काम-केंद्र है और उसके शिखर पर सहस्त्रार है—सिर के ऊपर जो सातवां चक्र है। मेरूदंड का जा आरंभ है वह पृथ्वी से जुड़ा है। कामवासना तुम्हारे भीतर सर्वाधिक पार्थिव चीज है। तुम्हारे मेरूदंड के आरंभिक चक्र के द्वारा तुम निसर्ग के संपर्क में आते हो। जिसे सांख्य प्रकृति कहता है— पृथ्वी,पदार्थ। और अंतिम चक्र से सहस्त्रार से तुम परमात्मा के संपर्क में होते हो।

तुम्हारे अस्तित्व के ये दो ध्रुव है। पहला काम केंद्र है, और उसके शिखर पर सहस्त्रार है। अंग्रेजी में सहस्त्रार के लिए कोई शब्द नहीं है। ये ही दो ध्रुव है। तुम्हारा जीवन या तो कामोन्मुख होगा या सहस्त्रोन्मुख होगा। या तो तुम्हारी ऊर्जा काम केंद्र से बहकर पृथ्वी में वापस जाएगी,या तुम्हारी ऊर्जा सहस्त्रार से निकलकर अनंत आकाश में समा जाएगी। तुम सहस्त्रार से ब्रहम में, परम सत्ता में प्रवाहित हो जाते हो। तुम काम केंद्र से पदार्थ जगत में प्रवाहित होते हो। ये दो प्रवाह है; ये दो संभावनाएं है।

जब तक तुम ऊपर की और विकसित नहीं होते, तुम्हारे दुःख कभी समाप्त नहीं होगे। तुम्हें सुख की झलकें मिल सकती है; लेकिन वे झलकें ही होगी और बहुत भ्रामक होंगी। जब ऊर्जा ऊर्ध्वगामी होगी। तुम्हें सुख की अधिकाधिक सच्ची झलकें मिलने लगेंगी। और जब ऊर्जा सहस्त्रार पर पहुँचेगी तुम परम आनंद को उपलब्ध हो जाओगे। वही निर्वाण है। तब झलक नहीं मिलती, तुम आनंद ही हो जाते हो।

योग और तंत्र की पूरी चेष्टा यह है कि कैसे ऊर्जा को मेरूदंड के द्वारा ऊध्र्वगामी बनाया जाए,कैसे उसे गुरूत्वाकर्षण के विपरीत गतिमान किया जाये। काम या सेक्स आसान है, क्योंकि वह गुरूत्वाकर्षण के विपरीत नहीं है। पृथ्वी सब चीजों को अपनी ओर खींच रही है। तुम्हारी काम ऊर्जा को भी पृथ्वी नीचे खींच रही है। तुमने शायद यह नहीं सुना हो, लेकिन अंतरिक्ष यात्रियों ने यह अनुभव किया है कि जैसे ही वे पृथ्वी के गुरूत्वाकर्षण के बाहर निकल जाते है,उनकी कामुकता बहुत क्षण हो जाती है। जैसे-जैसे शरीर का वजन कम होता है। कामुकता विलीन हो जाती है।

पृथ्वी तुम्हारी जीवन-ऊर्जा को नीचे की तरफ खींचती है। और यह स्वाभाविक है। क्योंकि जीवन-ऊर्जा पृथ्वी से आती है। तुम भोजन लेते हो, और उससे तुम अपने भीतर जीवन ऊर्जा निर्मित कर रहे हो। यह ऊर्जा पृथ्वी से आती है। और पृथ्वी उसे वापस खींचती है। प्रत्येक चीज अपने मूल स्त्रोत को लौट जाती है। और अगर यह ऐसे ही चलता रहा, जीवन ऊर्जा फिर-फिर पीछे लौटती रहे, तुम वर्तुल में घुमते रहे। तो तुम जन्मों-जन्मों तक ऐसे ही घूमते रहोगे। तुम इस ढंग से अनंतकाल तक चलते रह सकते हो। यदि तुम अंतरिक्ष यात्रियों की तरह छलांग नहीं लेते। अंतरिक्ष यात्रियों की तरह तुम्हें छलांग लेना है और वर्तुल के पार निकल जाना है। तब पृथ्वी के गुरूत्वाकर्षण का पैटर्न टूट जाता है। यह तोड़ा जा सकता है।

यह कैसे तोड़ा जा सकता है। ये उसकी ही विधियां है। ये विधियां इस बात की फ्रिक करती है कि कैसे ऊर्जा ऊर्ध्व गति करे, नये केंद्रों तक पहुचे; कैसे तुम्हारे भीतर नई ऊर्जा का आविर्भाव हो और कैसे प्रत्येक गति के साथ वह तुम्हें नया आदमी बना दे। और जिस क्षण तुम्हारे सहस्त्रार से, कामवासना के विपरीत ध्रुव से तुम्हारी ऊर्जा मुक्त होती है। तुम आदमी नहीं रह गए; तब तुम इस धरती के न रहे,तब तुम भगवान हो गए।

जब हम कहते है कि कृष्ण या बुद्ध भगवान है तो उसका यही अर्थ है। उनके शरीर तो तुम्हारे जैसे है। उनके शरीर भी रूग्ण होंगे और मरेंगे। उनके शरीरों में सब कुछ वैसा ही होता है जैसे तुम्हारे शरीरों में होता है। सिर्फ एक चीज उनके शरीरों में नहीं होती जो तुम्हारे शरीर में होती है। उनकी ऊर्जा ने गुरूत्वाकर्षण के पैटर्न को तोड़ दिया है। लेकिन वह तुम नहीं देख सकते; वह तुम्हारी आंखों के लिए दृश्य नहीं है।

लेकिन कभी-कभी जब तुम किसी बुद्ध की सन्निधि में बैठते हो तो तुम यह अनुभव कर सकते हो। अचानक तुम्हारे भीतर ऊर्जा का ज्वार उठने लगता है और तुम्हारी ऊर्जा ऊपर की तरफ यात्रा करने लगती है। तभी तुम जानते हो कि कुछ घटित हुआ है। केवल बुद्ध के सत्संग में ही तुम्हारी ऊर्जा सहस्त्रार की तरफ गति करने लगती है। बुद्ध इतने शक्तिशाली है कि पृथ्वी की शक्ति भी उनसे कम पड़ जाती है। उस समय पृथ्वी की ऊर्जा तुम्हारी ऊर्जा को नीचे की तरफ नहीं खींच सकती है। जिन लोगों ने जीसस,बद्ध या कृष्ण की सन्निधि में इसका अनुभव लिया है, उन्होंने ही उन्हें भगवान कहा है। उनके पास ऊर्जा का एक भिन्न स्त्रोत है जो पृथ्वी से भी शक्तिशाली है।

इस पैटर्न को कैसे तोड़ा जा सकता है। यह विधि पैटर्न तोड़ने में बहुत सहयोगी है। लेकिन पहले कुछ बुनियादी बातें ख्याल में ले लो।

पहल बात कि अगर तुमने निरीक्षण किया होगा तो तुमने देखा होगा कि तुम्हारी काम ऊर्जा कल्पना के साथ गति करती है। सिर्फ कल्पना के द्वारा भी तुम्हारी काम-ऊर्जा सक्रिय हो जाती है। सच तो यह है कि कल्पना के बिना वह सक्रिय नहीं हो सकती हे। यही कारण है कि जब तुम किसी के प्रेम में होते हो तो काम-ऊर्जा बेहतर काम करती है। क्योंकि प्रेम के साथ कल्पना प्रवेश कर जाती है। अगर तुम प्रेम में नहीं हो तो बहुत कठिन है; वह काम नहीं करेगी।

इसीलिए पुराने दिनों में पुरूष-वेश्याएं नहीं होती थी। सिर्फ स्त्री वेश्याएं होती थी। पुरूष वेश्या के लिए काम के तल पर सक्रिय होना कठिन है। अगर वह प्रेम में नहीं है। और सिर्फ पैसे के लिए वह प्रेम कैसे कर सकता है। तुम किसी पुरूष को तुम्हारे साथ संभोग में उतरने के लिए पैसे दे सकती हो; लेकिन अगर उसे तुम्हारे प्रति भाव नहीं है। कल्पना नहीं है तो वह सक्रिय नहीं हो सकता। स्त्रियां यह कर सकती है। क्योंकि उनकी कामवासना निष्क्रिय है,सच तो यह है कि उन्हें कोई भी भाव न हो। उनके शरीर लाश की भांति पड़े रहे सकते है। वेश्या के साथ तुम एक जीवित शरीर के साथ नहीं, एक मृत शरीर या लाश के साथ संभोग करते हो। स्त्रियां आसानी से वेश्या हो सकती है। क्योंकि उनकी काम ऊर्जा निष्क्रिय है।

तो काम केंद्र कल्पना से काम करता है। इसीलिए स्वप्नों में तुम्हें इरेक्शन हो सकता हे। और वीर्यपात भी हो सकता है। वहां कुछ भी वास्तविक नहीं है। सब कुछ कल्पना का खेल है। फिर भी देखा गया है कि प्रत्येक पुरूष को, अगर वह स्वस्थ है, रात में कम से कम दस दफा इरेक्श्न होता है। मन की जरा सी गति के साथ, काम का जरा सा विचार उठने से ही इरेक्शन हो जाएगा।

तुम्हारे मन की अनेक शक्तियां है, अनेक क्षमताएं है; और उनमें से एक है संकल्प। लेकिन तुम संकल्प से काम कृत्य में नहीं उतर सकते; काम के लिए संकल्प नपुंसक है। अगर तुम संकल्प से किसी के साथ संभोग में उतरते की चेष्टा करोगे तो तुम्हें लगेगा कि तुम नापुंसग हो गए। कभी चेष्टा मत करो। कामवासना में संकल्प नहीं, कल्पना काम करती है। कल्पना करो, ओर तुम्हारा काम केंद्र सक्रिय हो जाएगा।

तुम्हारे मन की अनेक शक्तियां है, अनेक क्षमताएं है। और उनमें से एक है संकल्प। लेकिन मैं क्यों इस तथ्य पर इतना जौर दे रहा हूं, क्योंकि यदि कल्पना ऊर्जा को गतिमान करने में सहयोगी है तो तुम सिर्फ कल्पना के द्वारा उसे चाहो तो ऊपर ले जा सकते हो। और चाहों तो नीचे ला सकते हो। तुम अपने खून को कल्पना से गतिमान नहीं कर सकते; तुम शरीर में और कुछ कल्पना से नहीं कर सकते। लेकिन काम ऊर्जा कल्पना से गतिमान की जा सकती है। तुम उसकी दिशा बदल सकते हो।

यह सूत्र कहता है: 'अपनी प्राण-शक्ति को प्रकाश किरण समझो।' स्वयं को अपने होने को प्रकाश किरण समझो। योग ने तुम्हारे मेरूदंड को सात चक्रों में बांटा है। पहला काम केंद्र है। और अंतिम सहस्त्रार है। और इन दोनों के बीच पाँच चक्रा है। कोई-कोई साधना पद्धति मेरूदंड को नौ केंद्रों में बाँटती है। कोई तीन में ही और कोई चार में। यह विभाजन बहुत अर्थ नही रखता है। प्रयोग के लिए पाँच केंद्र प्रर्याप्त है। पहला काम-केंद्र है; दूसरा ठीक नाभि के पीछे है; तीसरा ह्रदय के पीछे है। चौथा केंद्र तुम्हारी दोनों भौंहों के बीच में है—ठीक ललाट के बीच में; और अंतिम केंद्र सहस्त्रार तुम्हारे सिर के शिखर पर है। ये पाँच पर्याप्त है।

यह सूत्र कहता है: 'अपने को समझो,' उसका अर्थ है कि भाव करो, कल्पना करो। आंखे बंद कर लो और भाव करो कि मैं बस प्रकाश हूं। यह भाव या कल्पना नहीं है। शुरू-शुरू में कल्पना ही है। लेकिन यथार्थ में भी ऐसा ही है। क्योंकि हरेक चीज प्रकाश से बनी है। अब विज्ञान कहता है कि सब कुछ विद्युत है। तंत्र ने तो सदा से कहा कि सबकुछ प्रकाश कणों से बना है और तुम भी प्रकाश कणों से ही बने हो। इसीलिए कुरान कहता है कि परमात्मा प्रकाश है। तुम प्रकाश हो।

तो पहले भाव करो मैं बस प्रकाश-किरण हूं। और फिर अपनी कल्पना को काम केंद्र के पास ले जाओ। अपने अवधान को वहां एकाग्र करो और भाव करो कि प्रकाश किरणें काम केंद्र से ऊपर उठ रही है। मानों काम केंद्र से ऊपर उठ रही है। मानो काम केंद्र प्रकाश का स्त्रोत बन गया है। और प्रकाश किरणें वहां से नाभि केंद्र की और ऊपर उठ रही है।

विभाजन इस लिए जरूरी है, क्योंकि तुम्हारे लिए काम केंद्र को सीधे सहस्त्रार से जोड़ना कठिन है। छोटे-छोटे विभाजन इसलिए उपयोगी है। यदि तुम सीधे सहस्त्रार से जुड़ सको तो किसी विभाजन की जरूरत नहीं हे। तुम काम केंद्र के ऊपर के सभी विभाजन गिरा दे सकते हो। और उर्जा जीवन शक्ति प्रकाश की भांति सीधे सहस्त्रार की और उठने लगेगी।

जब तुम अनुभव करो कि अब नाभि पर स्थित दूसरा केंद्र प्रकाश का स्त्रोत बन गया है। कि प्रकाश किरणें वहां आकर इकट्ठी होने लगी है। तब ह्रदय केंद्र कीओर गति करो। और ऊपर बढ़ो। और जैसे-जैसे प्रकाश ह्रदय केंद्र पर पहुंचता है, वैसे ही तुम्हारे ह्रदय केंद्र की धड़कने बदल जायेगी। तुम्हारी श्वास गहरी होने लगेगी, और तुम्हारे ह्रदय में गरमाहट पहुंचने लगेगी। तब उससे भी और आगे और ऊपर बढ़ो।

और जैसे-जैसे तुम्हें गरमाहट अनुभव होगी,वैसे-वैसे ही, तुम्हारे भीतर एक जीवंतता का उन्मेष होगा। एक आंतरिक प्रकाश का उदय होगा।

काम-ऊर्जा के दो हिस्से है। एक हिस्सा शारीरिक है और दूसरा मानसिक है। तुम्हारे शरीर में हरेक चीज के दो हिस्से है। तुम्हारे शरीर मन की भांति ही तुम्हारे भीतर प्रत्येक चीज के दो हिस्से है: एक भौतिक है और दूसरा अभौतिक। काम-ऊर्जा के भी दो हिस्से है। वीर्य उसका भौतिक हिस्सा है। वीर्य उपर नहीं उठ सकता। उसके लिए मार्ग नहीं है। इसीलिए पश्चिम के अनेक शरीर शास्त्री कहते है कि तंत्र और योग की साधना बकवास है; वे उन्हें इनकार ही करते है। काम-ऊर्जा ऊपर की और कैसे उठ सकती है। इसके लिए कोई मार्ग नहीं हे। और वह ऊपर नहीं उठ सकती।

वे शरीर शस्त्री सही है। और फिर भी गलत है। काम ऊर्जा का जो भौतिक हिस्सा है, वह जो वीर्य है,वह तो ऊपर नहीं उठ सकता;लेकिन वही सब कुछ नहीं है। सच तो यह है कि वीर्य काम-ऊर्जा का शरीर भर है। वह स्वयं काम ऊर्जा नहीं हे। काम-ऊर्जा तो उकसा अभौतिक हिस्सा है। और यह अभौतिक तत्व ऊपर उठ सकता है। और उसी अभौतिक ऊर्जा के लिए मेरूदंड मार्ग का काम करता है। मेरूदंड और उसके चक्र मार्ग का काम करते है। लेकिन उसका तो अनुभव से जानना होगा। और तुम्हारी संवेदनशीलता मर गई है।

जब कोई हाथ तुम्हें स्पर्श करता है तो हाथ नहीं , दबाव और गरमाहट अनुभव होती है। हाथ तो अनुभव भर है। वह बुद्धि है, भाव नहीं। गरमाहट और दबाव अनुभूतियां है। हमने अनुभूतियां बिलकुल खो दी है। तुम्हें फिर से उसे विकसित करना होगा। केवल तभी इन विधियों को प्रयोग में ला सकते हो। अन्यथा ये विधियां काम नहीं करेंगी। तुम केवल बुद्धि से सोचोगे कि मैं अनुभव करता हूं। और कुछ भी घटित नहीं होगा। यही कारण है कि लोग मेरे पास आते है और कहते है कि यह विधि बहुत महत्व पूर्ण है, लेकिन कुछ घटित नहीं होता।

उन्होंने प्रयोग तो किया है परंतु वह एक आयाम चुक गये। वे अनुभव का आयाम चुक गये। तो तुम्हें पहले इस आयाम को विकसित करना होगा। और उसके कुछ उपाय है जिन्हें तुम प्रयोग में ला सकते हो।

तुम एक काम करो, अगर तुम्हारे घर में कोई छोटा बच्चा है तो प्रतिदिन एक घंटा उसे बच्चे के पीछे-पीछे चलो। बुद्ध के पीछे चलने से उनके पीछे चलना बेहतर है। और कही ज्यादा तृप्ति दायी हो सकता है। बच्चे को अपने चारों हाथ-पाँव पर चलने को कहो, घुटनों के बल चलने को कहो, बच्चे के पीछे तुम भी चलो।

और पहली बार तुम्हें अपने में एक नव जीवन का उन्मेष होगा। तुम फिर बच्चे हो जाओगे। बच्चे को देखो। और उसके पीछे-पीछे चलो। बच्चा घर के कोने-कोने में जाएगा। वह घर की हरेक चीज को स्पर्श करेगा। न

केवल स्पर्श करेगा। वह एक-एक चीज का स्वाद लेगा। वह एक-एक चीज को सूंघेगा। तुम बस उसका अनुकरण करो;वह जो भी करे तुम भी वही करो।

मनुष्य बच्चों से बहुत कुछ सीख सकता है। और देर-अबेर तुम्हारी सच्ची निर्दोषता प्रकट हो जाएगी। तुम भी कभी बच्चे थे। और तुम जानते हो कि बच्चा होना क्या है। सिर्फ उसका विस्मरण हो गया है।

तो अनुभूति के केंद्रों को फिर से विकसित करो। तो ही ये विधियां कारगर हो सकती है। अन्यथा तुम सोचते रहोगे कि ऊर्जा ऊपर उठ रही है। लेकिन उसकी कोई अनुभूति नहीं होगी। और अनुभूति के अभाव में कल्पना व्यर्थ है, बांझ है। अनुभूति भरा भाव ही परिणाम ला सकता है।

तुम और भी कई चीजें कर सकते हो। और उन्हें करने में कोई विशेष प्रयत्न भी नहीं है। जब तुम सोने जाओ तो विस्तर को, तकिए को महसूस, उसकी ठंडक को महसूस करो। तकिए को छुओ उसके साथ खेलो। अपनी आंखें बंद कर लो और सिर्फ एयरकंडीशनर की आवाज को सुनो। घड़ी की आवाज कोया चलती सड़क के शोरगुल को सुनो। कुछ भी सुनो उसे नाम मत दो कुछ कहो ही मत मन का उपयोग की मत करो। बस अनुभूति में जीओं।

सुबह जागने के पहले क्षण में, जब तुम्हें लगे कि नींद जा चुकी है तो तुरंत सोच-विचार मत करने लगो। कुछ क्षणों के लिए तुम फिर से बच्चे हो सकते हो। निर्दोष और ताजे हो सकते हो। तुरंत सोच-विचार में मत लग जाओ। यह मत सोचो कि क्या-क्या करना है। कब दफ्तर के लिए रवाना होना है, कौन सी गाड़ी पकड़नी है। सोच-विचार मत शुरू करो। उन मूढ़ताओं के लिए तुम्हें काफी समय मिलेगा। अभी रुको और अभी कुछ क्षणों के लिए सिर्फ ध्वनियों पर ध्यान दो। एक पक्षी गाता है। वृक्षों से हवाएँ गुजर रही है। कोई बच्चा रोता है या दूध देने वाला आया है। और पुकार रहा है। या वह पतीले में दूध डाल रहा है। जो भी हो रहा है उसे महसूस करो, उसके प्रति संवेदनशील बनो। खुले रहो। उसकी अनुभूति में डुबो। और तुम्हारी संवेदनशीलता बढ़ जायेगी।

जब स्नान करो तो उसे अपने पूरे शरीर पर अनुभव करो; पानी की प्रत्येक बूंद को अपने ऊपर गिरते हुए महसूस करो। उसके स्पर्श को, उसकी शीतलता और उष्णता को महसूस करो। पूरे दिन इसका प्रयोग करो; जब भी अवसर मिले प्रयोग करो। और सब जगह अवसर ही अवसर है। श्वास लेते हुए सिर्फ श्वास को अनुभव करो। भीतर जाती और बाहर आती श्वास को महसूस करो। केवल अनुभव करो1 अपने शरीर को ही महसूस करो। तुमने उसे भी नहीं अनुभव किया है।

हम अपने शरीर से भी इतने ही भयभीत है। कभी अपने शरीर को प्रेमपूर्वक स्पर्श नहीं करता है। क्या तुमने कभी अपने शरीर को ही प्रेम किया है। समूची सभ्यता इस बात से भयभीत है। कोई अपने को स्पर्श करे। क्योंकि बचपन में स्पर्श वर्जित रहा है। अपने को प्रेमपूर्वक स्पर्श करना हस्तमैथुन जैसा महसूस होता है। लेकिन अगर तुम अपने को ही प्रेम से स्पर्श नहीं कर सकते हो। तो तुम्हारा शरीर जड़ हो जाता है। मृत हो जाता है। वह दरअसल जड़ और मृत हो गया है।

अपनी आंखों को स्पर्श करो। तुम्हारी आंखों तुरंत ताजी और जीविंत हो उठेगी। अपने पूरी शरीर को महसूस करो; अपने प्रेमी के शरीर को महसूस करो; अपने मित्र के शरीर को महसूस करो। एक दूसरे को सहलाओ; एक दूसरे की मालिश करो। अपने मित्र के शरीर छुओ, उसकी छूआन को महसूस करो। तुम अधिक संवेदन शील हो जाओगे।

संवेदनशीलता और अनुभूति पैदा करो। तभी तुम इन विधियों का प्रयोग सरलता से कर सकते हो। और तब तुम्हें अपने भीतर जीवन ऊर्जा के ऊपर उठने का अनुभव होगा। इस ऊर्जा को बीच में मत छोड़ो। उसे सहस्त्रार तक जाने दो। स्मरण रहे कि जब भी तूम यह प्रयोग करो तो उसे बीच में मत छोड़ो; उसे पूरा करो। यह भी ध्यान रहे कि इस प्रयोग में कोई तुम्हें बाधा न पहुँचाए। अगर तुम इस ऊर्जा को कहीं बीच में छोड़ दोगे तो उससे तुम्हें हानि हो सकती है। इस ऊर्जा को मुक्त करना होगा। तो उसे सिर तक ले जाओ। और भाव करो कि तुम्हारा सिर एक द्वार बन गया है।

इस देश में हमने सहस्त्रार को हजार पंखुड़ियों वाले कमल के रूप में चित्रित किया है। सहस्त्रार का यही अर्थ है। तो धारणा करो कि हजार पंखुड़ियों वाला कमल खिल रहा है। और उसकी प्रत्येक पंखुडी से यह प्रकाश ऊर्जा ब्रह्मांड में फैल रही है। यह फिर एक अर्थों में संभोग है; लेकिन यह प्रकृति के साथ नहीं , परम के साथ संभोग है। और फिर एक आर्गाज्म घटित होता है।

आर्गाज्म दो प्रकार का होता है। एक सेक्सुअल और दूसरा स्प्रिचुअल सेक्सुअल आर्गाज्म निम्नतम केंद्र से आता है। और स्प्रिचुअल उच्चतम केंद्र से। उच्चतम केंद्र से तुम उच्चतम से मिलते हो और निम्नतम केंद्र से निम्नतम से।

साधारण संभोग में भी तुम यह प्रयोग कर सकते हो। दोनों लोग यह प्रयोग कर सकते हो। ऊर्जा को ऊर्ध्वगामी बनाओ। और तब संभोग तंत्र साधना बन जाता है। तब वह ध्यान बन जाता है।

लेकिन ऊर्जा को कही शरीर में, किसी बीच के केंद्र मत छोड़ो। कोई व्यक्ति बीच में आ सकता है जिसके साथ तुम्हें व्यावसायिक सरोकार हो, या कोई फोन आ जाए और तुम्हें प्रयोग को बीच में ही छोड़ना पड़े। इसलिए ऐसे समय में प्रयोग करो कि कोई तुम्हें बाधा न दे। और ऊर्जा को किसी केंद्र पर न छोड़ना पड़े। अन्यथा वह केंद्र जहां तुम ऊर्जा को छोड़ोगे धाव बन जाएगा और तुम्हें अनेक मानसिक रूग्णताओं का शिकार होना पड़ेगा।

तो सावधान रहो;अन्यथा यह प्रयोग मत करो। इस विधि के लिए नितांत एकांत आवश्यक है। बाधा रहितता आवश्यक है। और आवश्यक है कि तुम उसे पूरा करो। उर्जा को सिर तक जाना चाहिए। और वहीं से उसे मुक्त होना चाहिए।

तुम्हें अनेक अनुभव होंगे। जब तुम्हें लगेगा कि प्रकाश किरणें काम केंद्र से ऊपर उठने लगी है तो काम केंद्र पर इरेक्शन का ओर उत्तेजना का अनुभव होगा। अनेक लोग बहुत भयभीत और आतंकित स्थिति में मेरे पास आते है। और कहते है कि जब हम ध्यान करते है, जब हम ध्यान में गहरे जाते है। हमें इरेक्शन होता है। और वे चकित होकर पूछते है कि यह क्या है।

वे भयभीत हो जोत है क्योंकि वे सोचते है कि ध्यान मे कामुकता के लिए जगह नहीं होनी चाहिए। लेकिन तुम्हें जीवन के रहस्यों कापता नहीं है। यह अच्छा लक्षण है। यह बताता है। कि ऊर्जा उठ रही है। उसे गति की जरूरत है। तो आतंकित मत होओ। और यह मत सोचो कि कुछ गलत हो रहा है। यह शुभ लक्षण है। जब तुम ध्यान शुरू करते हो तो काम-केंद्र ज्यादा संवेदनशील, ज्यादा जीवंत, ज्यादा उत्तेजित हो जाएगा। वह बिलकुल शीतल हो जाएगा। अब उष्णता सिर में आ जाएगी।

और यह शारीरिक बात है। जब काम केंद्र-उत्तेजित होता है तो वह गरम हो जाता है। तुम उस गरमाहट को महसूस कर सकत हो। वह शारीरिक है। लेकिन जब ऊर्जा ऊपर उठती है तो काम केंद्र ठंडा होने लगता है। बहुत

ठंडा होने लगता है। और उष्णता सिर पर पहुंच जाती है। तब तुम्हें सिर में चक्कर आने लगेगा। जब ऊर्जा सिर में पहुँचेगी तो तुम्हारा सिर घूमने लगेगा। कभी-कभी तुम्हें घबराहट भी होगी;क्योंकि पहली बार ऊर्जा सिर में पहुंची है। और तुम्हारा सिर उससे परिचित नहीं है। उसे ऊर्जा के साथ सामंजस्य बिठाना पड़ेगा।

सिर में पहुंच जाए तो तुम बेहोश भी हो सकते हो। लेकिन यह बेहोशी एक घंटे से ज्यादा देर तक नहीं रह सकती। घंटे भर के भीतर ऊर्जा अपने आप ही वापस लौट जाएगी। या मुक्त हो जायेगी। तुम उस अवस्था में कभी एक घंटे से ज्यादा देर नहीं रह सकते। मैं कहता तो हूं एक घंटा, लेकिन असल में यह समय अड़तालीस मिनट है। यह उससे ज्यादा नहीं हो सकता,लाखों वर्षों के प्रयोग के दौरान कभी ऐसा नहीं हुआ है।

तो डरो मत; तुम बेहोश भी हो जाओ तो ठीक है। उस बेहोशी के बाद तुम इतने ताजा अनुभव करोगे कि तुम्हें लगेगा। कि मैं पहली बार नींद से, गहनत्म नींद से गुजरा हुं। योग में इसका एक विशेष नाम है; उसे योग-तंद्रा कहा जाता हे। यह बहुत गहरी नींद है। इसमे तुम अपने गहनत्म केंद्र पर सरक जाते हो। लेकिन डरो मत।

और अगर तुम्हारा सिर गरम हो जाए तो यह भी शुभ लक्षण है। ऊर्जा को मुक्त होने दो। भाव करो कि तुम्हारा सिर कमल के फूल की भांति खिल रहा है। भाव करो कि ऊर्जा ब्रह्मांड में मुक्त हो रही है। फैलती जा रही है। और जैसे-जैसे ऊर्जा मुक्त होगी, तुम्हें शीतलता का अनुभव होगा। इस उष्णता के बाद जो शीतलता आती है। उसका तुम्हें कोई अनुभव नहीं है। लेकिन विधि को पूरा प्रयोग करो; उसे कभी आधा अधूरा मत छोड़ा।

ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र, भाग-तीन

प्रवचन-47

विज्ञान भैरव तंत्र विधि—71 (ओशो)

प्रकाश-संबंधी दूसरी विधि:

बिजली कौंधने जैसा है—ऐसा भाव करो।

'या बीच के रिक्त स्थानों में यह बिजली कौंधने जैसा है—ऐसा भाव करो।
थोड़े से फर्क के साथ यह विधि भी पहली विधि जैसी ही है।

या बीच के रिक्त स्थानों में यह बिजली कौंधने जैसा है—ऐसा भाव करो।'

एक केंद्र से दूसरे केंद्र तक ताकी हुई प्रकाश-किरणों में बिजली के कौंधने का अनुभव करो—प्रकाश की छलांग का भाव करो। कुछ लोगों के लिए यह दूसरी विधि ज्यादा अनुकूल होगी, और कुछ लोगों के लिए पहली विधि ज्यादा अनुकूल होगी। यही कारण है कि इतना सा संशोधन किया गया है।

ऐसे लोग है जो क्रमश: घटित होने वाली चीजों की धारणा नहीं बना रहते; और कुछ लोग है जो छलाँगों की धारणा नहीं बना सकते। अगर तुम क्रम की सोच सकते हो, चीजों के क्रम से होने की कल्पना कर सकते हो, तो तुम्हारे लिए पहली विधि ठीक है। लेकिन अगर तुम्हें पहली विधि के प्रयोग से पता चले कि प्रकाश-किरणें एक केंद्र से दूसरे केंद्र पर सीधे छलांग लेती है। तो तुम पहली विधि का प्रयोग मत करो। तब तुम्हारे लिए यह दूसरी विधि बेहतर है।

'यह बिजली कौंधने जैसा है—ऐसा भाव करो।'

भाव करो कि प्रकाश की एक चिनगारी एक केंद्र से दूसरे केंद्र पर छलांग लगा रही है। और दूसरी विधि ज्यादा सच है, क्योंकि प्रकाश सचमुच छलांग लेता है। उसमें कोई क्रमिक, कदम-ब-कदम विकास नहीं होता। प्रकाश छलांग है।

विद्युत के प्रकाश को देखो। तुम सोचते हो कि यह स्थिर है; लेकिन वह भ्रम है। उसमें भी अंतराल है; लेकिन वे अंतराल इतने छोटे है कि तुम्हें उनका पता नहीं चलता है। विद्युत छलाँगों में आती है। एक छलांग, और उसके बाद अंधकार का अंतराल होता है। फिर दूसरी छलांग, और उसके बाद फिर अंधकार का अंतराल होती हे। लेकिन तुम्हें कभी अंतराल का पता नहीं चलता है। क्योंकि छलांग इतनी तीव्र है। अन्यथा प्रत्येक क्षण अंधकार आता है; पहले प्रकाश की छलांग और फिर अंधकार। प्रकाश कभी चलता नहीं, छलांग ही लेता है। और जो लोग छलांग की धारणा कर सकते है। यह दूसरी संशोधित विधि उनके लिए है।

'या बीच के रिक्त स्थानों में यह बिजली कौंधने जैसा है—ऐसा भाव करो।'

प्रयोग करके देखो। अगर तुम्हें किरणों का क्रमिक ढंग से आना अच्छा लगता है। तो वही ठीक है। और अगर वह अच्छा न लगे। और लगे कि किरणें छलांग ले रही है। तो किरणों की बात भूल जाओ और आकाश में कौंधने वाली विद्युत की, बादलों के बीच छलांग लेती विद्युत की धारणा करो।

स्त्रियों के लिए पहली विधि आसान होगी और पुरूषों के लिए दूसरी । स्त्री–चित क्रमिकता की धारणा ज्यादा आसानी से बना सकता है और पुरूष-चित ज्यादा आसानी से छलांग लेगा सकता है। पुरूष चित उछलकूद पसंद करता है; वह एक से दूसरी चीज पर छलांग लता है। पुरूष-चित में एक सूक्ष्म बेचैनी रहती है। स्त्री-चित में क्रमिकता की एक प्रक्रिया है। स्त्री-चित उछलकूद नहीं पसंद करता है। यही वजह है कि स्त्री और पुरूष के तर्क इतने अलग होते है। पुरूष एक चीज से दूसरी चीज पर छलांग लगाता रहता है। स्त्री को यह बात बड़ी बेबूझ लगती है। उसके लिए विकास क्रमिक विकास जरूरी है।

लेकिन चुनाव तुम्हारा है। प्रयोग करो, और जो विधि तुम्हें रास आए उसे चुन लो।

इस विधि के संबंध में और दो-तीन बातें। बिजली कौंधने के भाव के साथ तुम्हें इतनी उष्णता अनुभव हो सकती है। जो असहनीय मालूम पड़े। अगर ऐसा लगे तो इस विधि को असहनीय है तो इसका प्रयोग मत करो। तब तुम्हारे लिए पहली विधि है। अगर वह तुम्हें रास आए। अगर बेचैनी महसूस हो तो दूसरी विधि का प्रयोग मत करो। कभी-कभी विस्फोट इतना बड़ा हो सकता है। तुम भयभीत हो जा सकते हो। और यदि तुम एक दफा डर गए तो फिर तुम दुबारा प्रयोग न कर सकोगे। तब भय पकड़ लेता है।

तो सदा ध्यान रहे कि किसी चीज से भी भयभीत नहीं होना है। अगर तुम्हें लगे कि भय होगा ओर तुम बरदाश्त न कर पाओगे तो प्रयोग मत करो। तब प्रकाश किरणों वाली पहली विधि सर्वश्रेष्ठ है।

लेकिन यदि पहली विधि के प्रयोग में भी तुम्हें लगे कि अतिशय गर्मी पैदा हो रही है—और ऐसा हो सकता है। क्योंकि लोग भिन्न-भिन्न है—तो भाव करो कि प्रकाश किरणें शीतल है, ठंडी है। तब तुम्हें सब चीजों में उष्णता की जगह ठंडक महसूस होगी। वह भी प्रभावी हो सकता है। तो निर्णय तुम पर निर्भर है; प्रयोग करके निर्णय करो।

स्मरण रहे, चाहे इस विधि के प्रयोग में चाहे अन्य विधियों के प्रयोग में, यदि तुम्हें बहुत बेचैनी अनुभव हो या कुछ असहनीय लगे। तो मत करो। दूसरे उपाय भी है; दूसरी विधियां भी है। हो सकता है, यह विधि तुम्हारे लिए न हो। अनावश्यक उपद्रवों में पड़कर तुम समाधान की बजाय समस्याएं ही ज्यादा पैदा करोगे।

इसीलिए भारत में हमने एक विशेष योग का विकास किया जिसे सहज योग कहते है। सहज का अर्थ है सरल, स्वाभाविक, स्वत: स्फूर्त। सहज को सदा याद रखो। अगर तुम्हें महसूस हो कि कोई विधि सहजता से तुम्हारे अनुकूल पड़ रही है। अगर वह तुम्हें रास आए अगर उसके प्रयोग से तुम ज्यादा स्वस्थ,ज्यादा जीवंत,ज्यादा सुखी अनुभव करो, तो समझो कि वह विधि तुम्हारे लिए है। तब उसके साथ यात्रा करो; तुम उस पर भरोसा कर सकते हो। अनावश्यक समस्याएं मत पैदा करो। आदमी की आंतरिक व्यवस्था बहुत जटिल है। अगर तुम कुछ भी जबरदस्ती करोगे तो तुम बहुत जटिल है। अगर तुम कुछ भी जबरदस्ती करोगे तो तुम बहुत सी चीजें नष्ट कर दे सकते हो। इसलिए अच्छा है कि किसी ऐसी विधि के साथ प्रयोग करो जिसके साथ तुम्हारा अच्छा तालमेल हो।

ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र, भाग-तीन

प्रवचन-47

विज्ञान भैरव तंत्र विधि—72 (ओशो)

प्रकाश-संबंधी तीसरी विधि—
''भाव करो कि ब्रह्मांड एक पारदर्शी शाश्वत उपस्थिति है।''

''भाव करो कि ब्रह्मांड एक पारदर्शी शाश्वत उपस्थिति है।''

अगर तुमने एल. एस. डी. या उसी तरह के मादक द्रव्य का सेवल किया हो, तो तुम्हें पता होगा कि कैसे तुम्हारे चारों और का जगत प्रकाश ओर रंगों के जगत में बदल जाता है। जो कि बहुत पारदर्शी और जीवंत मालूम पड़ता है।

यह एल. एस. डी. के कारण नहीं है। जगत ऐसा ही है। लेकिन तुम्हारी दृष्टि धूमिल और मंद पड़ गई है। एल. एस. डी. तुम्हारे चारों रंगीन जगत नहीं निर्मित करता है, जगत पहले से ही रंगीन है, उसमें कोई भूल नहीं है। यह रंगों के इंद्रधनुष जैसा है; इसीलिए तुम्हें कभी नहीं प्रतीत होता है। कि जगत इतना रंग-भरा है। एल. एस. डी. सिर्फ तुम्हारी आंखों से धुंध को हटा देता है। वह जगत को रंगीन नहीं बनाता। एल. एस. डी. सिर्फ तुम्हारी आंखों धुंध को हटा देता है। वह जगत को रंगीन नहीं बनाता।
एक बिलकुल नया जगत तुम्हारे सामने होता है। एक मामूली कुर्सी भी चमत्कार बन जाती है। फर्श पर पडा जूता नए रंगों से, नई आभा से भर जाता है। सज जाता है; तब यातायात का मामूली शोर गूल भी संगीत पूर्ण हो उठता है। जिन वृक्षों को तुमने बहुत बार देखा होगा और फिर भी नहीं देखा होगा, वे मानों नया जन्म ग्रहण कर लेते है। यद्यपि तुम बहुत बार उनके पास गूजरें हो और तुम्हें ख्याल है कि तुमने उन्हें देखा है। वृक्ष का पत्ता-पत्ता एक चमत्कार बन जाता है।

और यथार्थ ऐसा ही है; एल. एस. डी. एक यथार्थ का निर्माण नहीं करता है। एल. एस डी तुम्हारी जड़ता को, तुम्हारी संवेदनहीनता को मिटा देता है। और तब तुम जगत को ऐसे देखते हो जैसे तुम्हें सच में उसे देखना चाहिए।

लेकिन एल एस डी तुम्हें सिर्फ एक झलक दे सकता है। और अगर तुम एल एस डी पर निर्भर रहने लगे, देर-अबेर वह भी तुम्हारी आंखों से धुंध का हटाने में असमर्थ हो जाएगा। फिर तुम्हें उसका अधिक मात्रा की जरूरत पड़ेगी, और मात्रा बढ़ती जायेगी और उसका असर करम होता जायेगा। फिर तुम्हें यदि एल एस डी या उस तरह की चीजें लेना छोड़ दोगे तो जगत तुम्हारे लिए पहले से भी ज्यादा उदास आरे फीका मालूम पड़ेगा। तब तुम और भी संवेदनहीन हो जाओगे।

अभी कुछ दिन पहले एक लड़की मुझसे मिलने आई । उसने कह कि मुझे संभोग में आर्गाज्म का कोई अनुभव नहीं होता है। उसने अनेक पुरूषों के साथ प्रयोग किया; लेकिन आर्गाज्म का कभी अनुभव नहीं हुआ। वह शिखर कभी आता ही नहीं। और वह लड़की बहुत हताश हो गई।

तो मैंने उस लड़की से कहा कि मुझे अपने प्रेम और काम जीवन के संबंध में विस्तार से बताओ, पूरी कहानी कहो। और तब मुझे पता चला कि वह संभोग के लिए बिजली के एक यंत्र का ,इलेक्ट्रानिक वाईब्रेटर का उपयोग कर रही थी। आजकल पशिचम में इसका बहुत उपयोग हो रहा है। लेकिन तुम अगर एक बार पुरूष जननेंद्रिय के लिए इलेक्ट्रानिक वाईब्रेटर का उपयोग कर लोगे, तो कोई भी पुरूष तुम्हें तृप्त नहीं कर पाएगा। क्योंकि इलेक्ट्रानिक वाईब्रेटर आखिर इलेक्ट्रानिक वाईब्रेटर ही है। तुम्हारी जननेंद्रियां जड़ हो जाएंगी। गुर्दा हो जाएगी। उस हालत मे आर्गाज्म, काम का शिखर अनुभव असंभव हो जाएगा। तुम्हें काम संभोग का शिखर कभी प्राप्त न हो सकेगा। और तब तुम्हें पहलेसे ज्यादा शक्तिशाली इलेक्ट्रानिक वाईब्रेटर की जरूरत पड़ेगी। और यह प्रक्रिया उस अति तक जा सकती है कि तुम्हारा पूरा काम यंत्र पत्थर जैसा हो जाये।

और यही दुर्घटना हमारी प्रत्येक इंद्रिय के साथ घट रही है। अगर तुम कोई बाहरी उपाय; कृत्रिम काम में लाओगे, तो तुम जड़ हो जाओगे। एल एस डी तुम्हें अंततः जड़ बना देगा; क्योंकि उससे तुम्हारे विकास नहीं होता है, तुम ज्यादा संवेदनशील नहीं होते हो।

अगर तुम विकसित होते हो तो यह एक भिन्न प्रक्रिया है। तब तुम ज्यादा संवेदनशील होगे। और जैसे-जैसे तुम ज्यादा संवेदनशील होते हो, वैसे-वैसे जगत दूसरा होता जाता है। अब तुम्हारी इंद्रियाँ ऐसी अनेक चीजें अनुभव कर सकती है जिन्हें उन्होंने अतीत में कभी नहीं अनुभव किया था। क्योंकि तुम उनके प्रति खुले नहीं थे। संवेदनशील नहीं थे।

यह विधि आंतरिक संवेदनशीलता पर आधारित है। पहले संवेदनशीलता को बढ़ाओं। अपने द्वार-दरवाजे बंद कर लो। कमरे में अँधेरा कर लो, और फिर एक छोटी सी मोमबत्ती जलाओ। और उस मोमबत्ती के पास प्रेमपूर्ण मुद्रा में बल्कि प्रार्थना पूर्ण भाव दशा में बैठो और ज्योति से प्रार्थना करो: ''अपने रहस्य को मुझ पर प्रकट करो।'' स्नान कर लो, अपनी आंखों पर ठंडा पानी छिड़क लो और फिर ज्योति के सामने अत्यंत प्रार्थना पूर्ण भाव दशा में होकर बैठो। ज्योति को देखो ओर शेष सब चीजें भूल जाओ। सिर्फ ज्योति को देखो। ज्योति को देखते रहो।

पाँच मिनट बाद तुम्हें अनुभव होगा कि ज्योति में बहुत चीजें बदल रही है। लेकिन स्मरण रहे, यह बदलाहट ज्योति में नहीं हो रही है; दरअसल तुम्हारी दृष्टि बदल रही है।

प्रेमपूर्ण भाव दशा में सारे जगत को भूलकर, समग्र एकाग्रता के साथ, भावपूर्ण ह्रदय के साथ ज्योति को देखते रहो, तुम्हें ज्योति के चारों और नए रंग, नई छटाएं दिखाई देंगी। जो पहले कभी नही दिखाई दी थी। वे रंग, वे छटाएं सब वहां मौजूद है; पूरा इंद्रधनुष वहां उपस्थिति है। जहां-जहां भी प्रकाश है, वहां-वहां इंद्रधनुष है। क्योंकि प्रकाश बहुरंगी है उसमें सब रंग है। लेकिन उन्हें देखने के लिए सूक्ष्म संवेदना की जरूरत है। उसे अनुभव करो और देखते रहो। यदि आंसू भी बहने लगें तो भी देखते रहो। वे आंसू तुम्हारी आंखों को निखार देंगे, ज्यादा ताजा बना जायेंगे।

कभी-कभी तुम्हें प्रतीत होगा कि मोमबत्ती या ज्योति बहुत रहस्यपूर्ण हो गई है। तुम्हें लगेगा कि यह वही साधारण मोमबत्ती नहीं है जो मैं आपने साथ लाया था। उसने एक नई आभा एक सूक्ष्म दिव्यता, एक भगवत्ता प्राप्त कर ली है। इस प्रयोग को जारी रखो। कई अन्य चीजों के साथ भी तुम इसे कर सकते हो।

मेरे एक मित्र मुझे कह रहे थे कि वे पाँच-छह मित्र पत्थरों के साथ एक प्रयोग कर रहे थे। मैंने उन्हें कहा था कि कैसे प्रयोग करना, और लोट कर मुझे पूरी बात कह रह थे। वे एकांत में एक नदी के किनारे पत्थरों के साथ प्रयोग कर रहे थे। वे उन्हें फील करने की कोशिश कर रह थे—हाथों से छूकर, चेहरे से लगा कर। जीभ से चक्कर, नाक से सूंघकर—वे उन पत्थरों का हर तरह सक फील करने कि कोशिश कर रहे थे। साधारण से पत्थर, जो उन्हें नदी किनारे मिल गये थे।

उन्होंने एक घंटे तक यह प्रयोग किया—हर व्यक्ति ने एक पत्थर के साथ। और मेरे मित्र मुझे कह रहे थे एक बहुत अद्भुत घटना घटी। हर किसी ने कहा: ''क्या यह पत्थर मैं अपने पास रख सकता हूं।'' मैं इसके प्रेम में पड़ गया हूं।

एक साधारण सा पत्थर, अगर तुम सहानुभूतिपूर्ण ढंग से उससे संबंध बनाते हो तो तुम प्रेम में पड़ जाओगे। और अगर तुम्हारे पास इतनी संवेदनशीलता नहीं है। तो सुंदर से सुंदर व्यक्ति के पास होकर भी तुम पत्थर के पास ही हो; तुम प्रेम में नहीं पड़ सकते हो।

तो संवेदनशीलता को बढ़ाना है। तुम्हारी प्रत्येक इंद्रिय को ज्यादा जीवंत होना है। तो ही तुम इस विधि का प्रयोग कर सकते हो।

''भाव करो कि ब्रह्मांड एक पारदर्शी शाश्वत उपस्थिति है।''

सर्वत्र प्रकाश है; अनेक-अनेक रूपों और रंगों में प्रकाश सर्वत्र व्याप्त है। उसे देखो। सर्वत्र प्रकाश है। क्योंकि सारी सृष्टि प्रकाश की आधारशिला पर खड़ी है। एक पत्ते को देखा एक फूल को देखो या एक पत्थर को देखा। आरे देर-अबेर तुम्हें अनुभव होगा कि उससे प्रकाश की किरणें निकल रही है। बस धैर्य से प्रतीक्षा करो। ज्यादा जल्द मत करो। क्योंकि जल्दी बाजी में कुछ भी प्रकट नहीं होता। तुम जब जल्दी में होते हो तो तुम जड़ हो जाते हो। किसी भी चीज के साथ धीरज से प्रतीक्षा करो। और तुम्हें एक अद्भुत तथ्य से साक्षात्कार होगा। जो सदा से मौजूद था, लेकिन जिसके प्रति तुम सजग नहीं थे। सावचेत नहीं थे।

''भाव करो कि ब्रह्मांड एक पारदर्शी शाश्वत उपस्थिति है।''

और जैसे ही तुम्हें इस शाश्वत अस्तित्व की उपस्थिति अनुभव होगी वैसे ही तुम्हारा चित बिलकुल मौन और शांत हो जाएगा। तुम तब उसके एक अंश भर होगे। किसी अद्भुत संगीत में एक स्वर भर। फिर कोई चिंता नहीं है। फिर कोई तनाव नहीं है। बूंद समुद्र में गिर गई, खो गई।

लेकिन आरंभ में एक बड़ी कल्पना की जरूरत होगी। और अगर तुम संवेदनशीलता बढ़ाने के अनय प्रयोग करते हो, तो वह सहयोगी होगा। तुम कई तरह के प्रयोग कर सकते हो। किसी का हाथ अपने हाथ में ले लो। आंखें बंद कर लो। और दूसरे के भीतर के जीवन को महसूस करो; उसे महसूस करो उसे अपनी और बहने दो; गति करने दो। फिर अपने जीवन को महसूस करो, और उसे दूसरे की और प्रवाहित होने दो। किसी वृक्ष के निकट बैठ जाओ और उसकी छाल को छुओ,स्पर्श करो। अपनी आंखें बंद कर लो। और वृक्ष में उठते-जीवन तत्व को अनुभव करो। और स्पर्श करो। तुम्हें तुरंत बदलाहट अनुभव करोगे।

मैंने एक प्रयोग के बारे में सुना है। एक डाक्टर कुछ लोगों पर प्रयोग कर रहा था कि क्या भाव दशा से शरीर में रासायनिक परिवर्तन होते है। अब उसके निष्कर्ष निकाला है कि भाव दशा से शरीर में तत्काल रासायनिक परिवर्तन होते है।

उसने बारह लोगों के समूह पर यह प्रयोग किया। उसने प्रयोग के आरंभ में उन सबकी पेशाब की जांच की। और सबकी पेशाब साधारण,सामान्य पाई गई। फिर हर व्यक्ति को एक भाव दशा के प्रयोग में रखा गया। एक को क्रोध, हिंसा, हत्या, मार-पीट से भरी फिल्म दिखाई गई। तीस मिनट तक उसे भयावह फिल्म दिखाई गई। वह मात्र फिल्म थी। लेकिन वह व्यक्ति उस भाव दिशा में रहा। दूसरे को एक हंसी खुशी की, प्रसन्नता की फिल्म दिखाई गई। वह आनंदित रहा। और उसी तरह से बाहर लोगों पर प्रयोग किया।

फिर प्रयोग के बाद उनकी पेशाब की जांच की गई; और अब सबकी पेशाब अलग थी। शरीर में रसायनिक परिवर्तन हुए थे। जो हिंसा और भय की भाव दशा में रहा वह अब बुझा-बुझा, बीमार था। और हंसी-खुशी की प्रसन्नता की फिल्म दिखाई गई। वह प्रफुल्ल था। उसकी पेशाब अलग थी। उसके शरीर की रासायनिक व्यवस्था अलग थी।

तुम्हें बोध नहीं है। तुम अपने साथ कर रहे हो। जब तुम कोई खून ख़राबे की फिल्म देखने जाते हो तो तुम नहीं जानते हो कि तुम क्या कर रहे हो। तुम अपने शरीर की रसायनिक व्यवस्था बदल रहे हो। जब तुम कोई जासूसी उपन्यास पढ़ते हो। तुम अपनी हत्या स्वयं कर रहे हो। तुम उत्तेजित हो जाओगे; तुम भयभीत हो जाओगे। तुम तनाव से भर जाओगे। जासूसी उपन्यास का यही तो मजा है। तुम जितने उत्तेजित होते हो, तुम उसका उतना ही सूख लेते हो। आगे क्या घटित होने वाला है, इस बात को लेकर जितना सस्पेंस होगा; तुम उतने ही अधिक उत्तेजित होगे। और इस भांति तुम्हारे शरीर का रसायन बदल रहा है।

ये सारी विधियां भी तुम्हारे शरीर का रसायन बदलती है। अगर तुम सारे जगत को जीवन और प्रकाश से भरा अनुभव करते हो, तो तुम्हारे शरीर का रसायन बदलता है। और यह एक चेन रिएक्शन है, इस बदलाहट की एक शृंखला बन जाती है। जब तुम्हारे शरीर का रसायन बदलता है और तुम जगत को देखते हो। तो वही जगत ज्यादा जीवंत दिखाई पड़ता है। और जब वह ज्यादा जीवंत दिखाई पड़ता है तो तुम्हारे शरीर का रासायनिक व्यवस्था और भी बदलती है। ऐसे एक शृंखला निर्मित हो जाती है।

यदि यह विधि तीन महीने तक प्रयोग की जाए, तो तुम भिन्न ही जगत में रहने लगोगे। क्योंकि अब तुम ही भिन्न व्यक्ति हो जाओगे।

ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र, भाग-तीन

प्रवचन-47